ੴ सतिगुर प्रसादि ॥
गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक
गुरमति ज्ञान

पौष-माघ, संवत् नानकशाही ५४३
वर्ष ५ अंक ५ जनवरी 2012

संपादक : सिमरजीत सिंघ *एम. ए, एम. एम. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ *एम. एम. सी.*

चंदा	
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

सिरीरागु महला १ ॥
लेखै बोलणु बोलणा लेखै खाणा खाउ ॥ लेखै वाट चलाईआ लेखै सुणि वेखाउ ॥
लेखै साह लवाईअहि पड़े कि पुछण जाउ ॥१॥ बाबा माइआ रचना धोहु ॥
अंधै नामु विसारिआ ना तिसु एह न ओहु ॥१॥रहाउ॥ जीवण मरणा जाइ कै एथै खाजै कालि ॥
जिथै बहि समझाईऐ तिथै कोइ न चलिओ नालि ॥ रोवण वाले जेतड़े सभि बंनहि पंड परालि ॥२॥
सभु को आखै बहुतु बहुतु घटि न आखै कोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ कहणि न वडा होइ ॥
साचा साहबु एकु तू होरि जीआ केते लोअ ॥३॥ नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥४॥ *(पन्ना १५)*

उपरोक्त शबद में श्री गुरु नानक देव जी फरमान करते हैं कि हमारा बोलचाल, हमारा खाना-पीना थोड़े ही समय के लिए है; जिस जीवन-सफर में हम चल रहे हैं वो सफर भी थोड़े ही समय के लिए है तथा ये जो दुनिया के रंग-तमाशे हैं ये भी कुछ ही समय के लिए हैं। आगे गुरु जी कहते हैं कि हे भाई! यह जो माया का खेल है यह भी कुछ ही दिनों का है। इस कुछ दिन के माया के खेल में मस्त हुआ मनुष्य प्रभु का नाम जपना भी भूल गया है। न माया साथ निभी और न ही प्रभु-नाम की कमाई हो सकी। 'रहाउ' के बाद गुरु जी का कथन है कि मनुष्य संसार में जन्म लेने के बाद उम्र भर पदार्थवाद में ही फंसा रहता है। जिन संगी-साथियों के लिए मनुष्य यह सब दुनियावी भाग-दौड़ करता है उनमें से कोई भी उसका साथ नहीं निभाता जब जीवन भर के कर्मों का हिसाब किया जाता है। मनुष्य के मरने के बाद उसको रोने वाले अब पराली की गांठें लिए घूम रहे हैं जिसका मरे मनुष्य को अब कोई लाभ नहीं।

हे भाई! सभी लोग धन-पदार्थों की मांग करते हुए अधिक से अधिक की ही मांग करते हैं, थोड़े की मांग कोई भी नहीं करता। किसी ने भी मांगने से कभी तौबा नहीं की अर्थात् कोई नहीं कहता कि अब और धन-पदार्थ नहीं मांगने। हे प्रभु! एक तू ही सदा कायम रहने वाला है, शेष सब नाशवान है। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि हे प्रभु! तू मेरा उन्हीं के संग साथ बनाना जो दुनिया के लोगों की नजरों में नीची से नीची जाति के हैं। मैं उन (तथाकथित) नीचों का साथ चाहता हूं, (तथाकथित) बड़ों (धनवान) के मार्ग पर चलने की मुझे कोई इच्छा नहीं। मुझे पता है कि तेरी कृपा वहीं पर होती है जहां गरीबों (नीचों) की खबरसार ली जाती है।

तात्पर्य यह कि हमें अपनी आजीविका की कमाई करते हुए केवल प्रभु-नाम की ही मांग करनी चाहिए तथा उसका जाप करते हुए ही जीवन सफल बनाना चाहिए। हमें ऊंचे बनने की अहं भावना को त्याग कर प्रभु का अदना-सा शिष्य बन कर रहना चाहिए।

हमें गर्व है अपनी ऐतिहासिक विरासतों पर

योद्धाओं का काम होता है इतिहास सृजित करना। इस इतिहास को संभालने का महत्वपूर्ण काम उनकी वारिस कौमों ने करना होता है। लेखक उस इतिहास की परत-दर-परत शोध करके उसको पुस्तकों में संभालते हैं। आने वाली पीढ़ियां उससे रौशनी लेकर अपना भविष्य रौशन करती हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिन कौमों ने अपनी ऐतिहासिक प्राप्तियों को नहीं संभाला, वे कौमें दुनिया के नक्शे से खत्म हो गईं; जिन्होंने अपनी गौरवमयी प्राप्तियों को आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचाया उन्होंने ही दुनिया के नक्शे पर राज्य किया।

सिक्ख कौम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की बात करें तो इस पर वो समय भी आया जब सिक्खों के सिरों के मूल्य लगाए गए। बड़ी संख्या में कत्ल-ए-आम हुए। ऐसे समय में सिक्खों का बहुत सारा कीमती विरासती खजाना उनके हाथों से जाता रहा। सिक्खों के कत्ल-ए-आम के समय उनकी बहुत सारी विरासती वस्तुएं नष्ट कर दी गईं। जब सिक्ख दोबारा अपने पैरों पर खड़े हुए तो उन्होंने अपनी विरासतों-निशानियों को खोजने एवं संभालने का यत्न शुरू किया जो अब तक निरंतर जारी है।

अब जब सिक्ख दुनिया के हर कोने में छा चुके हैं तो सिक्खों को अपने बहुमूल्य इतिहास पर ढेर सारा नाज है। आज इन्होंने अपने इसी इतिहास को दुनिया के सामने स्मारक रूप में दृष्टमान करके नई तकनीक द्वारा लोगों को अवगत करवाने का प्रयत्न किया है। अनंदपुर साहिब में 'विरासत-ए-खालसा', चपड़चिड़ी का 'फतह बुर्ज', छोटे घल्लूघारे तथा बड़े घल्लूघारे की यादगार रूप में निर्मित 'स्मारक' खालसा के इतिहास की मुंह-बोलती विरासतें हैं।

विरासत को संभालने का कार्य पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी से शुरू हो गया था। श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी प्रचार-यात्राओं के दौरान भक्तों, महापुरुषों की बाणी को एकत्र करने का अति कठिन कार्य स्वयं ही शुरू कर दिया था। करतारपुर नगर बसाकर इस एकत्र की हुई विरासत को संभालकर अपने गुरसिक्खों को इसकी महानता से अवगत करवाया। बहुत सारी बाणी की खुद रचना की। इस सारी विरासत की सेवा-संभाल की जिम्मेवारी गुरु साहिब ने अगले गुरु साहिबान को सौंपी। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने से पूर्व गुरु साहिबान द्वारा रचित पवित्र बाणी एवं अन्य एकत्र की गई बाणी की संपादना करके इस विरासत को श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रूप में संभाला। इस सारी संभाली हुई विरासत को श्री अमृतसर में अद्भुत श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण करके उसमें प्रकाश किया। बाबा बुड्ढा जी को इस बाणी रूपी ज्ञान से संगत को अवगत करवाने की जिम्मेवारी सौंपी गई। छठे पातशाह के जन्म-स्थान की याद को संभालने के लिए श्री गुरु अरजन देव जी ने छः-हरटा कुआं खुदवा कर सिक्खों को एक और विरासत सौंपी। पंचम पातशाह साहिब श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत सिक्ख धर्म में प्रथम शहादत थी। जब जहांगीर के साथ माहौल खुशगवार हुआ तो श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा साईं मीआं मीर जी के सहयोग से गुरु जी का शहीदी-स्थान स्थापित किया गया। सिक्खों में राजसी शक्ति की प्रेरणा कायम करने के लिए श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण करवाया गया।

गुरु साहिबान के पद-चिन्हों पर चलते हुए सिक्खों ने भी अपने गुरु साहिबान तथा शहीदों की विरासती निशानियों को बड़ी श्रद्धा से संभाला हुआ है। जिन स्थानों पर गुरु साहिबान अपनी प्रचार-यात्राओं के दौरान गए, उन्होंने अपने पवित्र चरण-कमलों से जिस जगह को भाग्य लगाए उस स्थान पर गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवा कर संभाल लिया। जिन वृक्षों तले गुरु साहिब ने विश्राम किया उन वृक्षों को भी विरासती रूप में संभाल लिया। इस तरह अनेकों गांवों में गुरु साहिबान तथा शहीद सिक्खों की निशानियां संभाली हुई मिलती हैं। अनेक स्थानों पर हस्तलिखित सिक्ख इतिहास गुरसिक्खों ने संभाला हुआ है। श्री

अकाल तख्त साहिब, तख्त श्री केसगढ़ साहिब, तख्त श्री पटना साहिब, तख्त श्री हजूर साहिब, तख्त श्री दमदमा साहिब पर अनेकों विरासती यादगारों की संभाल की गई है। डेरा बाबा नानक, भाई रूपा, फफड़े भाई के, घुंगराणा, घुढाणी, कांगड़, मोती बाग पटियाला, तोशाखाना कपूरथला, किला मुबारक पटियाला, नंगल, घड़ूंआ, धमतान साहिब, नरवाणा, मलेरकोटला, सौंटी, कपूरगढ़ आदि ऐसे वर्णनणीय गांव हैं जहां सिक्खों के तवारीख-ए-तवरोकातों के दर्शन किए जा सकते हैं।

अंग्रेज अपने राज्य-काल के समय सिक्खों का बहुत सारा बहुमूल्य खजाना अपने साथ इंग्लैंड ले गये जो आजकल ब्रिटिश संग्रहालय में है। सिक्खों ने बहुत अधिक जद्दोजहद करके इनसे कुछ वस्तुएं प्राप्त कीं परंतु अब भी बहुत सारी वहीं हैं।

इतनी अमूल्य विरासत के मालिक होने के बावजूद भी जाने-अनजाने में गुरु-घरों की नई इमारतों का निर्माण करते समय बहुत सारे ऐतिहासिक चिन्ह आलोप हो गए; बहुत सारा हस्तलिखित साहित्य खजाना हमारे हाथों से जाता रहा। सिक्खों द्वारा सदियों की मेहनत से सिक्ख रेफ्रेंस लायब्रेरी तथा केंद्रीय सिक्ख संग्रहालय में संभाली गई विरासती वस्तुएं १९८४ ई के फौजी हमले के समय हमसे छीन ली गईं।

अपने गुरु साहिबान तथा शहीदों की यादगार शताब्दियां मनाते समय सिक्खों में नई जागृति पैदा हुई। अपने विरसे को दर्शाने एवं संभालने की चेतना हेतु अनंदपुर साहिब की धरती पर 'विरासत-ए-खालसा' के रूप में एक अजूबा हमारे सामने आया है। आधुनिक डिजीटल तकनीक के प्रयोग से बनाये गए इस विरासती अजूबे ने दुनिया भर के अजूबों में अपना नाम शामिल कर लिया है। इसमें पंजाबियों तथा सिक्खों की विरासत को इस तरह संजोकर दृष्टमान किया गया है कि इसे देखते ही हर कोई अश-अश कर उठता है। दुनिया के किसी भी कोने से आया व्यक्ति मात्र ७० मिनट में हमारी विरासत के प्रति भरपूर जानकारी हासिल करके गुरु साहिबान के चरणों में शीश झुकाये बिना नहीं रह सकता।

चपड़चिड़ी (सरहिंद) में बाबा बंदा सिंघ बहादुर द्वारा की 'सरहिंद फतह' की याद में 'फतिह बुर्ज' निर्मित किया गया है। सूबा सरहिंद वजीर खां द्वारा भोली-भाली जनता पर किए जा रहे अत्याचारों को बंद करने के लिए दसवें पातशाह साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादुर को थापड़ा देकर जुल्म की जड़ उखाड़ने के लिए नांदेड़ से पंजाब भेजा था। बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने चपड़चिड़ी के मैदान में इन जालिमों का सफाया करके सिक्ख राज्य की नींव रखी। इस ऐतिहासिक विजय की विरासत को दर्शाता यह 'फतह बुर्ज' आज दुनिया की सात ऊंची इमारतों में अपना नाम शुमार करवा चुका है।

छोटा घल्लूघारा (काहनूंवान, जिला गुरदासपुर) सिक्ख शहीदों की वो विरासत है जिसको दुनिया के सामने पेश करना शहीदों को सच्ची श्रद्धांजलि देना है। १७४६ ई में ऐमनाबाद के फौजदार जसपत राय ने सत्य के गवाह लगभग दस हजार सिक्खों को शहीद कर दिया। इन शहीदों का विरासती स्मारक दुनिया भर के लोगों के आगे अपना इतिहास रहती दुनिया तक मूर्तिमान करता रहेगा।

१७६२ ई में कुप्प रहीड़ गांव (मलेरकोटला, जिला संगरूर) के पास सिक्खों ने बड़ी बहादुरी के साथ अहमद शाह अब्दाली की फौज का मुकाबला किया। भारत को बार-बार लूटने आये अहमद शाह अब्दाली ने कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा कि इस बार ऐसी बहादुर कौम के साथ उसका पाला पड़ेगा। लाखों की संख्या में चढ़कर आई फौज का मुकाबला करते हुए ३५,००० सिंघ-सिंघणियां शहीदियां पा गए। इन शहीदों की बहादुरी का इतिहास दुनिया भर में पहुंचाने एवं सदैव के लिए हर एक के सीने में बसाने के लिए कुप्प रहीड़ में विरासती स्मारक का निर्माण करवाया गया।

इन विरासती इमारतों को बनाकर सिक्खों ने अपने इतिहास को संभालने हेतु एक कदम और आगे बढ़ाया है। अभी तो यह सिक्ख इतिहास की मात्र एक झांकी ही है, बहुत-सारा काम इस सम्बंधी होना अभी शेष है। सिक्ख ऐतिहासिक विरसे को संभालने तथा उसका प्रसारण करने हेतु स. प्रकाश सिंघ बादल, मुख्यमंत्री पंजाब एवं पंजाब सरकार ने यह जो प्रयत्न किया है उसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। सिक्ख कौम में इनके इस कार्य की सदैव प्रशंसा होती रहेगी।

श्री गुरु हरिराय साहिब

-प्रिं: तेजा सिंघ, डॉ. गंडा सिंघ

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बाबा गुरदित्ता जी, सूरज मल, अणी राय, बाबा अटल राय तथा श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब पांच सुपुत्र थे। बाबा अटल राय, अणी राय तथा बाबा गुरदित्ता जी अपने पिता जी के जीते-जी ही परलोक गमन कर गये थे। सूरज मल सांसारिक मामलों में जरूरत से ज्यादा खचित रहने वाला था तथा श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब सांसारिक मामलों में दिलचस्पी नहीं लेते थे। बाबा गुरदित्ता जी के धीरमल तथा श्री (गुरु) हरिराय साहिब दो सुपुत्र थे। धीरमल चाहे उम्र में बड़ा था किंतु वफादार नहीं था और गुरु-घर के विरोधियों से मिलकर साजिशें रचता रहता था। मात्र श्री (गुरु) हरिराय साहिब ने ही उन कष्टदायक दिनों में अपने आप को सिक्ख कौम के नेतृत्व के योग्य सिद्ध किया था।

श्री गुरु हरिराय साहिब का जन्म ३० जनवरी, १६३० ई (१९ माघ, संवत् १६८६) को कीरतपुर साहिब में हुआ था। शुरू से ही उन्होंने अपने अंदर शक्ति तथा कोमलता का एक अच्छा सुमेल दर्शाया था। वे एक शिकारी थे तथा साथ ही इतने दयावान भी कि जिन जानवरों का वे पीछा करते थे या जिनको पकड़ लेते थे, उनको मारते नहीं थे। वे उनको पकड़कर घर ले आते, उनको आवश्यकतानुसार खुराक देते तथा अपने चिड़ियाघर में संभालकर रखते। बाल्यावस्था में एक दिन जब वे बाग में से गुजर रहे थे तो उनके खुले चोगे में फंसकर फूलों की कुछ पत्तियां टूटकर जमीन पर गिर गईं। यह दृश्य वे सहन न कर सके तथा उनकी आंखों में आंसू आ गये। वे बाबा फरीद जी की ये पंक्तियां बड़े शौक से गाया करते थे:

सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा ॥
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा ॥ *(पन्ना १३८४)*

अर्थात् सभी के दिल अमोलक हैं। अगर तुझे (मनुष्य को) परमात्मा से मिलने की इच्छा है तो किसी का दिल न दुखाना।

उन्होंने कहा, "मंदिर या मस्जिद की मुरम्मत हो सकती है या पुनर्निर्माण किया जा सकता है परंतु टूटा हुआ दिल मुरम्मत नहीं हो सकता।" वे दर्शन के लिए आने वाले सिक्खों को यही पूछते कि क्या वे लंगर चलाते हैं तथा भोजन बांटकर छकते हैं? दूसरों का भला करने वाली बात पर वे अन्य सब बातों से अधिक खुश होते थे।

यह सब कुछ होते हुए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि श्री गुरु हरिराय साहिब एक सिपाही भी थे। उन्होंने २२०० घुड़सवार सैनिक अपने पास रखे, जिनको जरूरत पड़ने पर एकदम इस्तेमाल किया जा सकता था, परंतु गुरु जी अमन की नीति पर चलने के लिए दृढ़ थे। जब शाहजहां के पुत्र दिल्ली तख्त के लिए लड़ रहे थे तो गुरु जी अपनी सेना को मैदान में लाने के लिए मजबूर हो गये, किंतु उन्होंने इस बात का ख्याल रखा कि खून-खराबा न किया जाये। दाराशिकोह बहुत-से अन्य सूफियों की तरह सिक्ख मत का प्रशंसक था तथा लगता है

कि गुरु जी के प्रति उसके दिल में सम्मान था। गुरु जी ने एक बार उसको एक दुर्लभ औषधि भेजकर उसकी जान बचाई थी। औरंगजेब की फौज के आगे-आगे भागता हुआ दाराशिकोह गोइंदवाल साहिब पहुंचा तथा उसने गुरु जी को विनती की कि वे उसको पकड़े जाने से बचायें। गुरु जी ने पीछा कर रही फौज के विरुद्ध दरिया ब्यास का रास्ता रोकने के लिए अपने आदमी भेजे ताकि शरणार्थी शहजादा बच निकलने में सफल हो जाये।

औरंगजेब को यह बात नहीं भूली। तख्त पर बैठते ही उसने गुरु जी को अपने सामने हाजिर होने के लिए बुलावा भेजा। गुरु जी खुद नहीं गए। उन्होंने अपने पुत्र रामराय को भेजा। औरंगजेब इस बात की तसल्ली करना चाहता था कि सिक्ख मत में इसलाम के विरुद्ध कोई बात तो नहीं है। बादशाह ने रामराय से बहुत सारे प्रश्न पूछे। उनमें से एक प्रश्न श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में से एक पंक्ति थी जो मुसलमानों के इस विश्वास से संबंधित थी कि जिन मृतक शरीरों को मृत्यु के पश्चात जला दिया जाता है, वे दोजख (नरक) में जाते हैं। वो पंक्ति इस प्रकार है :

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर ॥
घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पकार ॥
(पन्ना ४६६)

बादशाह ने रामराय को पूछा कि "श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इस तरह मुसलमानों की निंदा क्यों की गई है?" रामराय ने उक्त पंक्ति में एक शब्द बदलकर मौका बचा लिया। उसने कहा कि "मुसलमान शब्द कातिब की गलती से लिखा गया है। वास्तव में यह शब्द 'बेईमान' है।" बादशाह खुश हो गया तथा उसने रामराय को दून की वादी में जागीर दे दी।

गुरु जी को अपने इस पुत्र में सच्चाई एवं हौसले की कमी की खबर सुनकर बहुत दुख हुआ। उन्होंने उसको गुरिआई के जिम्मेवार पद के लिए अयोग्य घोषित कर दिया और इस बात के लिए मन बना लिया कि रामराय की जगह गुरगद्दी श्री (गुरु) हरिक्रिशन साहिब को दी जायेगी।

श्री गुरु हरिराय साहिब के समय सिक्ख मत ने अच्छी उन्नति की। उन्होंने एक सन्यासी भक्त भगवान, जो सिक्ख हो गया था, को पंजाब से बाहर पूरब दिशा में सिक्ख मत के प्रचार के लिए भेजा। कैथल तथा बागड़ियां, दो भाई परिवारों को यमुना तथा सतलुज दरियाओं के मध्य वाले इलाके में प्रचार का काम सौंपा गया। ब्यास तथा रावी के मध्य 'लंमां' क्षेत्र में भाई फेरू गुरु जी के मसंद के रूप में काम कर रहा था।

श्री गुरु हरिराय साहिब पूरी योग्यता के साथ लगभग सत्रह वर्ष तक गुरिआई निभाने के उपरांत ६ अक्तूबर, १६६१ ई (५ कार्तिक, संवत् १७१८) को कीरतपुर साहिब में ज्योति-जोत समा गये।

('सिक्ख इतिहास' पुस्तक से सधन्यवाद)
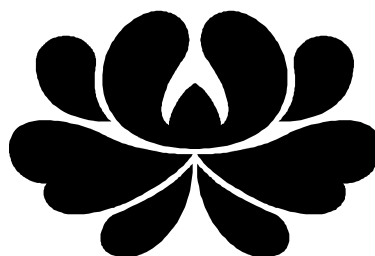
'तवारीख गुरू खालसा' कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन एवं शख्सियत

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

जगत में दो शक्तियां आदि काल से ही कार्यरत रही हैं। एक शक्ति मनुष्य को शुभ कार्यों की तरफ प्रेरित करती है तथा दूसरी शक्ति उसे बुरे कामों की तरफ खींचती है। देवता और दानव इन शक्तियों का नेतृत्व करते हैं। जब समाज में धर्म, न्याय, शांति, प्रेम, भाईचारा, दया, क्षमा आदि भारी हो तो माना जाता है कि देवताओं का समाज में बोलबाला है तथा जब समाज में कलह-क्लेश, द्वेष, ईर्ष्या, नफरत, वैर-विरोध, बेईमानी, लूट-खसूट आदि अग्नियां भारी होती हैं तो समझा जाता है कि दानव वृत्ति वाले लोग समाज पर भारी हैं। हिंदू धर्म में इस समय को 'कलयुग' का नाम दिया गया है। दुनिया का इतिहास यह बताता है कि जब भी ईर्ष्यालु तथा झगड़ालू वृत्तियां भारी पड़कर सामाजिक तानाबाना नष्ट करती हैं तो कोई न कोई मुक्ति-दाता या धर्म का पथ-प्रदर्शक समाज में आता है और स्वयं कष्ट सहन करके जनसाधारण का कष्ट निवारण करता है।

परमात्मा को सृष्टि का कर्ता, भर्ता एवं हर्ता माना जाता है। ईसाई धर्म में यीशू मसीह, इसलाम में पैगंबर मुहम्मद साहब तथा हिंदू धर्म में श्री रामचंद्र, श्रीकृष्ण जी को धर्म के चिन्ह माना गया है जिन्होंने अपनी जगत-यात्रा के दौरान जनसाधारण के दुखों को दूर करके उनको धर्म के मार्ग पर चलाने का कार्य किया। सिक्ख धर्म में भी इसी सिद्धांत को माना गया है। सिक्ख धर्म के आगाज से पहले समाज की हालत में इतनी गिरावट आ गई थी कि उस समय सामने आए धर्म के पथ-प्रदर्शकों को दस जामे (जन्म) धारण करने पड़े थे। श्री गुरु नानक देव जी के जगत-आगमन का कारण बताते हुए भाई गुरदास जी कहते हैं :

वरतिआ पापु जगत्रि ते धउलु उडीणा निसि दिनि रोआ।
बाझु दइआ बलहीण होउ निघरु चलौ रसातलि टोआ।
खड़ा इकते पैरि ते पाप संगि बहु भारा होआ।
थंमे कोइ न साधु बिनु साधु न दिसै जगि विच कोआ।
धरम धउलु पुकारै तलै खड़ोआ ॥ (वार १:२२)

भाई साहिब बताते हैं कि समाज का सदाचारक पतन इस हद तक पहुंच गया कि धरती का भार उठाये खड़ा धर्म रूपी बैल भी कुरलाने लग गया था। परमात्मा सदैव न्यायकारी भूमिका निभाता है। जब समाज की हालत में गिरावट आ जाए तो परमात्मा किसी महापुरुष को धर्म का मार्ग पुन: स्थापित करने के लिए भेजता है। जगत में श्री गुरु नानक देव जी का आगमन इसी शृंखला का एक हिस्सा है-*"सुणी पुकारि दातार प्रभु गुरु नानक जग माहि पठाइआ।"* *"राणा रंकु बराबरी"* का मिशन श्री गुरु नानक देव जी ने आरंभ किया था तथा उनके उत्तराधिकारी ने इसको सफलतापूर्वक आगे चला दिया था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी भी जगत में आगमन का उद्देश्य धर्म की भावना को पुन: स्थापित करना बताते हैं--
"धरम चलावन संत उबारन दुसट सभन को मूल उपारन ॥"

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म श्री गुरु

**सिक्ख विश्व कोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो: ९८७२०-७४३२२*

तेग बहादर साहिब तथा माता गुजरी जी के घर पटना साहिब में हुआ था। जब उनका जन्म हुआ तो पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब पूरब की यात्रा पर थे। पंजाब सहित सारे उत्तरी भारत में गुरु जी को बादशाह के जुल्म की खबर मिली तो वे पटना साहिब में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी (बचपन का नाम गोबिंद राय था; गुरगद्दी पर बैठने तथा खालसे की सृजना के पश्चात श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी नाम प्रसिद्ध हुआ) का दीदार करके शीघ्र ही पंजाब की ओर चल पड़े थे और परिवार को भी शीघ्र ही पंजाब आने का आदेश कर दिया था। कुछ वर्ष पटना साहिब में ही निवास करने के पश्चात माता गुजरी जी तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी पारिवारिक सदस्यों एवं श्रद्धालुओं सहित पंजाब की तरफ चल दिये। पंजाब में अनंदपुर साहिब की धरती पर पहुंचने पर उनका भरपूर स्वागत हुआ। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की हर प्रकार की दुनियावी शिक्षा का प्रबंध किया गया। फारसी, गुरमुखी, संस्कृत तथा शस्त्र-विद्या के लिए उस्ताद नियत किये गये।

दिल्ली में श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत के उपरांत अनंदपुर साहिब में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को गुरगद्दी सौंपने की रस्म अदा की गई। श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत के बाद सिक्खों में मायूसी की भावना आ गई थी जिसको दूर करने के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उनमें जोश एवं उत्साह पैदा करने का कार्य आरंभ किया ताकि समय आने पर जब्र एवं जुल्म को रोकने के लिए अन्य नये यत्न किये जा सकें। गुरु जी ने समकालीन हालातों के मद्देनजर योजनाबंदी आरंभ कर दी थी। ढाडियों की वारों तथा साहित्य की सृजना ने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुरु जी ने वक्त के अनुसार अपना निवास-स्थान अनंदपुर साहिब से पाउंटा साहिब कर लिया था ताकि *'धरम चलावन संत उबारन'* के मिशन को आगे चलाया जा सके। उन्होंने ढाडियों, कवीशरों, लिखारियों को जोशीला साहित्य रचने तथा गायन करने का आदेश कर दिया था। 'तवारीख गुरू खालसा' का लेखक गुरु जी के दरबार में बावन कवियों/ढाडियों का होना बताता है जो इस प्रकार हैं--अंम्रित राय, कवरेस, मंगल, सैनापती, सुखदेव, चंदन, ईशर, आलम, उदे राय, हंस राज, रावल, राम, अल्लू, मधू, चंद, बल्लू, लक्खा, बिधीआ, नंद लाल, ब्रिज लाल, खानखाना, पिंडी लाल, रामदास, हुसैनी, निहाल, मदन लाल, धयान सिंघ, धरम सिंघ, दया सिंघ, रोशन सिंघ, माला सिंघ, आसा सिंघ, नंद सिंघ, सुक्खा सिंघ, धंना सिंघ, टहिकन, नंद राम, नानू, गुरदास, अचलदास, अणी राय, सयाम, सैना, सेखा, राम चंद, बालू, मानी, सुंदर, सोहन, जान, हीर, ठाकुर।

गुरु जी सिक्खों को शस्त्र तथा शास्त्र-विद्या में निपुण करना चाहते थे, क्योंकि शास्त्र-विद्या के बिना शस्त्र-विद्या मनुष्य के मन में एक तरफ जब्र तथा अहं का विकास करती है तथा दूसरी तरफ मनुष्य वहमों, भ्रमों, पाखंडों तथा कर्मकांडों में फंसा रहता है। शास्त्रों से प्राप्त किया आत्म-ज्ञान मनुष्य के मन में श्रद्धा, भावना, दृढ़ता, सब्र, संतोष तथा शूरवीरता के गुण भरने की सामर्थ्य रखता है। संस्कृत उस समय की देव भाषा मानी जाती थी। दीन-दुनिया के व्यवहार की बहुत सारी श्रेष्ठ बातें इस भाषा में लिखे ग्रंथों में कैद थीं। गुरु साहिब सिक्खों को इस कार्य में समर्थ बनाना चाहते थे ताकि वे गुरमुखी में विद्यमान गुरमति का दैवी तथा दुनियावी ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ अन्य धार्मिक ग्रंथों से भी सीधा ज्ञान हासिल करके अपने जीवन का विकास तथा समाज की

भलाई कर सकें। भारतीय लोगों की समस्याओं के निवारण के लिए उनके धर्म-ग्रंथों का अध्ययन जरूरी था जो कि संस्कृत भाषा में रचे गये थे। हर एक व्यक्ति को इन ग्रंथों को पढ़ने की इजाजत नहीं थी। सिक्खों को संस्कृत विद्या प्रदान करने की सेवा गुरु जी ने रघुनाथ पंडित के जिम्मे लगाई। लेखक बताता है कि "जब उस पंडित ने सिक्खों की जाति पूछी तो सिक्खों ने बढ़ई, जिमींदार, नाई, छींबा, कुहार आदि अपनी-अपनी जाति बताई। तब पंडित ने पढ़ाना बंद कर दिया। फिर गुरु जी के कहने पर भी पंडित ने यही जवाब दिया कि "आपके सिक्ख 'शूद्र' ज्यादा हैं जिनको वेद-विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं। धर्म-शास्त्र में लिखा है कि वेद-विद्या पढ़ने वाले शूद्र और शूद्र को पढ़ाने वाले के मुंह में सिक्का ढालकर उनको मार देना चाहिए। यह फल तो चाहे अब कोई राजा नहीं देता किंतु बिरादरी मुझे निष्कासित कर देगी।" लेखक बताता है कि संस्कृत विद्या प्राप्त करने तथा हिंदू धर्म-ग्रंथों का अध्ययन करने के लिए गुरु जी ने पांच सिक्ख बनारस भेज दिए। पाउंटा साहिब में शस्त्र तथा शास्त्र-शिक्षा का अभ्यास आरंभ हुआ तो शस्त्रों एवं शास्त्रों के बहुत-से धनी गुरु-दर्शन को आने लगे। समय की हकूमत से डरकर जिनकी ये ख्वाहिशें छुपी हुई थीं, गुरु जी की छत्र-छात्रा तले उनको प्रफुल्लित करने का मौका मिलने लगा।

गुरु जी की जीवन-शैली बहुत सारे लोगों को प्रभावित कर रही थी। आम लोग जहां गुरु जी से प्रभावित होकर सिक्ख बनते जा रहे थे वहीं पहाड़ी राजा इस बात से ईर्ष्या करने लगे थे कि कहीं ताकत हासिल करके गुरु जी उनके राज्य पर काबिज ही न हो जायें। भंगाणी के स्थान पर गुरु जी का पहला युद्ध इसी श्रृंखला का एक हिस्सा है। बहुत-से पहाड़ी राजा सामूहिक रूप से गुरु जी के विरुद्ध चढ़ आये थे। जो पहाड़ी राजा गुरु जी के विरुद्ध लड़े वे इस प्रकार हैं--भीमचंद, फतेहशाह, गोपाल चंद गुलेरी, क्रिपाल चंद कांगड़ीआ, बीरसैन मंडीवाला, केसरी चंद जसवालीआ, दिआल चंद काठगढ़ीआ, हरी चंद हंडूरीआ, करम चंद भंबोरीआ, उमैद सिंह जसवांदा, अनंत चंद प्रिथीपुरीआ, झगड़ चंद मनसवाला, भाऊ सिंघ सीबेवाला, धरमपाल कुटलैड़दा, दया सिंघ नूरपुरीआ, भाग सिंघ तिलोकपुरीआ, टेक सिंघ कसतवारीआ, सुधर सैण मंडी वाला, गुरभज इंदौरीआ, जै चंद बेझे वाला, ठोडी सिंघ संघरीवाला, संसार चंद नदौणीआ, हरी चंद कोटीवाला, लच्छू चंद कसौलीवाला, भूत सिंघ थयोग।

भंगाणी का युद्ध सिक्खों के लिए परीक्षा की घड़ी थी, क्योंकि राजाओं की फौज में शिक्षित सिपाही तथा जरनैल थे तथा गुरु जी की तरफ से लड़ने वाले सिक्ख उनके साधारण श्रद्धालु थे। भंगाणी के युद्ध में गुरु जी की ओर से ऐसे श्रद्धालु लड़ रहे थे जिन्होंने हथियार को कभी पकड़कर भी नहीं देखा था। लेखक दो ऐसे श्रद्धालुओं का जिक्र करता हुआ कहता है कि "लालचंद हलवाई तथा भाई नंद चंद के हाथ एवं हौंसला देखकर पठान दंग रह गए, क्योंकि इन दोनों ने भैंसें चराने या लकड़ी तौलने के बिना कभी कुछ किया ही नहीं था। इन्होंने बड़े-बड़े योद्धाओं जैसा जंग कर दिखाया तथा अनेकों को मौत के घाट उतार कर शहीदी पाई।" पीर बुद्धू शाह जैसे बंदगी करने वाले फकीरों ने युद्ध में हिस्सा लेकर यह सिद्ध कर दिया था कि धर्म के मार्ग पर चलते हुए जरूरत पड़ने पर शस्त्रों का सहारा भी लिया जा सकता है। भंगाणी के युद्ध ने सिक्खों के हौंसले बुलंद कर दिए थे जिसका वर्णन करते हुए गुरु जी 'बचित्र नाटक' में बताते हैं :

जुध जीत आए जबै टिकै न तिन पुर पांव ॥
काहलूर मैं बांधियो आन अनंदपुर गांव ॥
(अध्याय ८:३६)

अनंदपुर साहिब में दूर-नजदीक की संगत गुरु जी के दर्शन को आने लगी थी। मसंद भेंटाएं लेकर गुरु-घर आने लगे तथा जो श्रद्धालु पाउंटा साहिब नहीं आ सकता थे वे अनंदपुर साहिब गुरु जी के दर्शन करने आने लगे। अनंदपुर साहिब में दोनों वक्त दीवान लगता था। अमृत वेले श्री गुरु नानक देव जी द्वारा आरंभ किया नित्तनेम होता। आसा की वार के गायन के उपरांत ढाडी वारें गाते थे जो संगत को विरासत के साथ जोड़ने के साथ-साथ उनमें वीर रस भी पैदा करती थीं। इसके अलावा गुरु जी अपने से पूर्व रह चुके गुरु साहिबान की शिक्षाएं संगत को दृढ़ करवाते थे। वे सबको यही उपदेश दृढ़ करवाते कि अकाल पुरख की रजा में प्रसन्न रहना, अपनी किरत करके तथा बांट कर छकना, गुरु-मंत्र का जाप करते रहना, मड़ी-मसाणी, गोर, मठ, मरे हुए पितर आदि की कल्पना, जो बिप्रों ने अपने गुजारे के लिए लोगों को भटकाने के ढकोसले रचे हैं, इन पर एतबार नहीं करना और न ही इनकी पूजा करनी।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी श्री गुरु नानक देव जी के सदाचारी तथा परोपकारी मिशन का प्रचार कर रहे थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को शिकायतें मिलने लगीं कि मसंद गुरु-मिशन को आगे चलाने में बाधा बने हुए हैं। भले ही सभी मसंद ऐसा नहीं कर रहे थे मगर शिकायतें ज्यादा होने के कारण गुरु जी ने इस सम्बंधी दीर्घ विचार करनी शुरू कर दी कि या तो मसंदों को सुधारा जाये या फिर इनसे निजात पा ली जाये। मानवीय वृत्ति को काबू करना बहुत कठिन कार्य होता है। गुरु जी से परोक्ष होकर लोग यह सोचने लग जाते हैं कि अब उन्हें कौन देख रहा है। गुरु-परमेश्वर का भय ऐसे मनुष्य के मन में नहीं रहता बल्कि ऐसे मनुष्य धर्म तथा सदाचारक जीवन-जाच को नकारात्मक तौर पर लगातार प्रभावित करते रहते हैं। गुरु जी ने मसंद-प्रथा को खत्म करने का फैसला कर लिया तथा सिक्खों को आदेश कर दिया कि भेंटाएं सीधा गुरु-घर में अर्पित की जायें। लेखक बताता है कि "चार माह तक गुरु जी मसंदों, का बंदोबस्त करने में लगे रहे। मसंदों का बंदोबस्त करके आगे से हुक्म दिया कि कोई सिक्ख मीणे, मसंद, मेवड़े को गुरु की कार-भेंट न दे। जो कुछ अपनी श्रद्धा से देना हो वो अपने-अपने घर में ही गुरु की गोलक में जमा करते रहो। वर्ष, दो वर्ष बाद जब भी गुरु-घर आओ तो अर्पण कर जाया करो।"

गुरु साहिबान ने समाज में स्त्री की सामाजिक हालत को सुधारने हेतु बहुत यत्न किये थे। जिस देश की स्त्रियां इतनी बलवान हों उस देश के मर्दों को कायरों वाला व्यवहार शोभा नहीं देता। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय बहुत सारी सिक्ख बीबियों (महिलाओं) ने जंगों-युद्धों में सिक्ख नौजवानों की सहायता की थी तथा भाई भागो जैसी स्त्रियां आगे होकर तेग के जौहर दिखा रही थीं।

लेखक भी गुरु जी की शिक्षाओं का महिलाओं के जीवन पर पड़ रहे प्रभाव का वर्णन करते हुए बताता है कि माझे की संगत में एक महिला बीबी दीप कौर गुरु-दर्शन के लिए श्री अनंदपुर साहिब आ रही थी। रास्ते में वह संगत से आगे निकल गई। अकेली जान चार तुर्कों ने उसको घेर लिया। उनके पास तलवारें थीं। बीबी भी अमृतधारी सिंघणी थी। उसने अपना कंगन उतार कर नीचे फेंक दिया। एक तुर्क नीचे झुक कर कंगन उठाने लगा तो बीबी दीप कौर ने तलवार से उसको

वहीं ढेर कर दिया। जब दो आदमी और आगे आए तो उसने उनको भी झटका दिया। इतनी देर में पीछे से और संगत आ गई। उसने चौथे को भी मार दिया और सभी को कुएं में फेंक दिया। बीबी दीप कौर के दिलेरी भरे कारनामे सुनकर गुरु जी बहुत प्रसन्न हुए तथा संगत में उसका सम्मान करते हुए गुरु जी ने अन्य महिलाओं को भी बीबी दीप कौर जैसी हिम्मत वाली बनने की प्रेरणा की। गुरु साहिब जहां सिक्ख महिलाओं की प्रशंसा करते थे वहीं वे सिक्खों को भी युद्ध के समय दूसरे धर्मों की स्त्रियों का सत्कार करने की प्रेरणा भी देते थे। गुरु साहिब का आदेश था कि जंग के समय किसी बुजुर्ग मनुष्य, स्त्री तथा बच्चों पर हाथ नहीं उठाना। गुरु जी जानते थे कि युद्ध तथा संकट के समय अक्सर ही स्त्रियों के साथ ज्यादती होती है। उन्होंने अपने सिक्खों को ऐसा करने से मना किया था। सपने में भी पर-स्त्री का संग न करने की प्रेरणा करने वाले गुरु जी सिक्खों को धर्म एवं सदाचार के नियमों की पालना करने पर जोर देते थे। लेखक बताता है कि एक सिक्ख राम सिंघ तुर्कों के हाथ लग गया। उन्होंने जबरन उस सिक्ख के केश काट दिये तथा उसकी सुन्नत कर दी। किसी तरह वह बचकर गुरु जी के चरणों में जा हाजिर हुआ। उसने तुर्कों द्वारा जबरन मुसलमान बनाने का प्रसंग सुनाया गुरु जी ने आदेश दिया कि "कड़ाह प्रशाद बनाओ। इसको अमृत छकाकर इसके हाथों से कड़ाह प्रशाद खालसे में बंटवा दो।"

गुरु-घर सिक्खों की टकसाल थी जहां से नाम-बाणी के अभ्यास के साथ-साथ संगत की हर प्रकार की सेवा करने का बल मिलता था। गुरु-घर के समूह पारिवारिक सदस्य वही कार्य करते थे जो गुरु मर्यादा के अनुकूल होते थे। संगत की सेवा को सबसे उत्तम माना जाता था। श्री अनंदपुर साहिब में भी गुरु जी का संघर्ष जब्र तथा अन्याय के विरुद्ध जारी था, इसलिए उनको कई युद्ध लड़ने पड़े थे। बड़े संघर्ष की तैयारी के लिए वे यत्न कर रहे थे ताकि एक बड़े संघर्ष के साथ समूचे देश की जनता को जगाया जा सके। अब गुरु जी का सारा ध्यान इस ओर था। गुरु जी समूह धार्मिक विश्वासों को मानने वाले लोगों को इस संघर्ष में शामिल करना चाहते थे, इसी लिए जिस भी धर्म का कोई श्रद्धालु गुरु जी के दर्शन को आता तो गुरु जी उसके साथ लोक-परलोक के संघर्ष की चर्चा करके उसको परमार्थ के मार्ग पर चलने की प्रेरणा करते थे।

गुरु जी का प्रताप दिनोदिन बढ़ रहा था। दूर-दूर से संगत गुरु-दर्शन को आती थी। इस मौके गुरु जी के आगे एकत्र होती माया (धन) से जहां सेवा तथा परोपकार के काम होते थे वहीं आधुनिक शस्त्र बनाने वाले भी क्रियाशील हो गये थे। गुरु जी निर्भय एवं निरवैर रहकर जनसाधारण के परोपकारी कार्य कर रहे थे, जिससे उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई थी। वैर-विरोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि को गुरु-घर में कोई स्थान प्राप्त नहीं था। जो गुरु-घर से वैर रखते थे उनको समझाने का यत्न करके शांति तथा स्वाभिमान से जीवन बसर करने का मार्ग दर्शाया जाता था। शांतमयी कार-विहार को गुरु-घर की कमजोरी समझकर बलपूर्वक उनको दबाने या जीतने का जो यत्न करते उनको हमेशा हार का मुंह देखना पड़ता। पहाड़ी रियासतों की आपसी रंजिशों को गुरु जी ने दूर करने का यत्न किया परंतु ईर्ष्या एवं अहंकार ने पहाड़ी राजाओं की कोई पेश न जाने दी। वे बहुमूल्य मानवीय हितों की बजाय अपने छोटे-छोटे स्वार्थों तक सीमित थे। हर एक रियासत दूसरी को नीचा दिखाने के यत्न में

लगी हुई थी। गुरु जी के साथ जो भी पहाड़ी राजा युद्ध करने की सोचता उसकी सारी योजना धरी-धराई रह जाती थी। गांवों के गांव गुरु जी के श्रद्धालु बनते जा रहे थे तथा गुरु जी की एक आवाज पर वे हथियार तथा अपने आदमी लेकर गुरु जी की सेवा में आ जाते थे। जो गलती श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के विरोधियों ने की थी वही गलती श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के विरोधी भी निरंतर कर रहे थे। वे गुरु जी के इर्द-गिर्द जुड़ी संगत को साधारण समझ लेते थे तथा यह अनुमान लगाने लग जाते थे कि शिक्षित फौज के सामने राज-साज के बिना ये थोड़े-से अप्रशिक्षित लोग कितनी देर टिक सकते हैं? वे इस बात का विश्लेषण करने में सदैव फेल रहे कि गुरु जी द्वारा लड़ने वाले सिक्ख विश्वास एवं धार्मिक प्रेरणा के साथ लड़ते हैं जो यह समझते थे कि इस लोक में गुरु सहायी है तथा परलोक में भी मात्र गुरु ही रक्षा करेगा। लोक तथा परलोक में बहुत कम अंतर समझने वाले मृत्यु के भय से नहीं डरते तथा न ही उनको यह चिंता होती है कि उनके मरने के उपरांत उनके परिवार की देखभाल कौन करेगा। सारी चिंताओं से मुक्त होकर लड़ने वालों को जीतना आसान कार्य नहीं होता। इसी कारण गुरु जी के विरुद्ध की गई हरेक लड़ाई में पहाड़ी राजा हार का मुंह देखते रहे थे। गुरु जी के विरुद्ध अपने आप को बलहीन समझकर उन्होंने समय की मुगल हकूमत की मदद लेनी योग्य समझी। हकूमत के बहुत सारे सहयोगी कट्टरपंथी पहले ही गुरु-घर के विरुद्ध थे तथा वे लगातार यत्न कर रहे थे कि जैसे-तैसे इस लहर को खत्म करके इसलाम का झंडा पूरे भारत में लहराया जा सके। श्री गुरु अरजन देव जी तथा श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत ने उनके मंसूबों को अभी तक कामयाब नहीं होने दिया था, मगर वे अभी भी निरंतर इस दिशा में कार्यशील थे।

१६९९ ई को वैसाखी के अवसर पर गुरु जी ने खालसा पंथ की सृजना की थी। एक बड़े पंडाल में सजी हुई संगत में से गुरु जी ने एक के बाद एक पांच सिक्खों के सिरों की मांग की थी। अलग-अलग जातियों तथा भूगोलिक क्षेत्रों से संबंधित पांच सिक्ख गुरु जी को सिर भेंट करने के लिए आगे आये थे। गुरु जी ने उनको खंडे-बाटे का अमृत छकाकर खालसा पंथ की जत्थेबंदी का आधार बांधा था। अमृत तैयार करते समय माता जीतो जी द्वारा बाटे में बताशे डालना तथा पांच बाणियों का पाठ--"जपु, जापु, चौपई, सवैये, अनंदु साहिब" करना लेखक बताता है। इसी तरह गुरु जी ने अमृत छकाकर पांच प्यारों--भाई दया सिंघ, भाई धरम सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ, भाई मोहकम सिंघ, भाई साहिब सिंघ को जात-पात तथा भ्रम-भेद से मुक्त करके एक जैसा बना दिया था। इस जत्थेबंदी में शामिल होने वालों के लिए कुछ सदाचारक नियम धारण करने आवश्यक थे जिनको 'रहित' कहा जाता है। गुरु जी द्वारा बताई हुई रहित के अनुसार रोजाना नित्तनेम के अलावा शस्त्र धारण करने आवश्यक थे। नित्तनेम आध्यात्मिक विकास के लिए जरूरी है तथा शस्त्र स्वाभिमान कायम रखने का प्रतीक हैं। अनेक प्रकार के शस्त्र गुरु जी के पास भेंट होने लगे थे तथा बहुत-से शस्त्र अनंदपुर साहिब में भी तैयार किए जाने लगे थे। गुरु जी तथा उनके सिक्ख जो शस्त्र इस्तेमाल करते थे उनमें कटारें, कुतके, खंडे, गुरज, जंजैलें, जमूरे, तमंचे, तलवारें, तीर-कमान, तेगें, तोपें (देसी), नेजे, पिस्तौलें, बंदूकें, बरशियां, भाले, रामजंगे आदि शामिल थे। अनंदपुर साहिब की सुरक्षा के लिए गुरु जी ने चार किले--अनंदगढ़, लोहगढ़, केसगढ़, फतेहगढ़ भी बनवाये थे।

गुरु जी की शख्सियत तथा योजनाबंदी इस

तरह की थी कि उनके द्वारा किये गए हर कार्य से जनसमूह प्रभावित होता था। गुरु जी द्वारा खालसा पंथ की जत्थेबंदी से प्रभावित होकर पहाड़ी राजा भी गुरु जी के पास आए थे। गुरु जी ने उनको समझाया कि "वर्ण-व्यवस्था ने समाज को कमजोर किया है। परस्पर विश्वास की कमी तथा समाज में विभाजन हो जाने के कारण एकता कम हुई है। बाहरी ताकतों तथा मुगलों ने इसका भरपूर फायदा उठाया है। एकता तथा इत्तफाक रोटी-बेटी की सांझ के साथ बढ़ते-फूलते हैं तथा मजबूत होते हैं, अतः खालसा जत्थेबंदी में शामिल होकर इज्जत तथा स्वाभिमान वाला जीवन बसर करो।" राजाओं ने कहा कि "ऊंची कुल होने के कारण हम शूद्रों के साथ कोई सांझ नहीं रख सकते।" गुरु जी ने उनको समझाते हुए कहा, "जिन सिंघों को आप शूद्र कहते हो, अकाल पुरख के प्रताप से एक दिन यही आपके बादशाह होंगे तथा आप लोग इनके अधीन रहकर दिन गुजारोगे। अब आप इनके साथ रोटी की सांझ नहीं करते फिर बेटियां देकर सांझ करना चाहोगे।" खालसा जत्थेबंदी की स्थापना गुरु जी द्वारा जब्र एवं जुल्म करने वालों के विरुद्ध बड़े संघर्ष का आगाज थी। भाई नंद लाल जी गुरु जी द्वारा सृजित खालसे का उद्देश्य उजागर करते हुए कहते हैं :

खालसा सोइ निरधन को पालै।
खालसा सोइ दुषट को गालै।
खालसा सोइ नाम जप करै।
खालसा सोइ मलेछ पर चढ़ै।
खालसा सोइ नाम सिउं जोड़े।
खालसा सोइ बंधन को तोड़े।
खालसा सोइ जो चढ़े तुरंग।
खालसा सोइ जो करे नित जंग।
खालसा सोइ शसतर को धारै।
खालसा सोइ दुषट को मारै। (तनखाहनामा ५०-५४)

गुरु जी की शख्सियत का सबसे बड़ा गुण था कि वे बिलकुल हिम्मत हार चुके लोगों में नई जान डाल देते थे। उनकी प्रेरणा, जोश तथा उत्साह का सदका अल्पसंख्यक होते हुए भी सिक्ख बड़ी से बड़ी फौज का मुकाबला करने के समर्थ हो गये थे। जैसे शेर शारीरिक आकार पक्ष से तो हाथी से छोटा होता है परंतु दिलेरी एवं हौंसले का सदका वह हाथी को भी काबू करने के समर्थ होता है, उसी तरह गुरु जी के सिक्ख अल्पसंख्या में होते हुए भी मुगल फौजों तथा अनेकों पहाड़ी रियासतों की सांझी फौजों का सामना करने एवं उन्हें मात देने के समर्थ थे। गुरु जी के विरुद्ध जितने भी युद्ध हुए, अनंदपुर साहिब का युद्ध उनमें से विशेष महत्व रखता है, क्योंकि यह युद्ध धर्म के मार्ग पर चलने वालों तथा धर्म-ग्रंथों की कसमें खाकर तोड़ने वालों के दरमियान था। इस युद्ध में मुगलों तथा पहाड़ी राजाओं की सांझी फौज गुरु जी के विरुद्ध चढ़ आई थी। अनंदपुर साहिब के युद्ध में गुरु जी के विरुद्ध चढ़ आई सांझी फौज में अलग-अलग रियासतों तथा केंद्रीय फौज के जो जरनैल शामिल हुए थे वे इस प्रकार बताए गए हैं : शेर मुहम्मद खां, खिजर खां, नजीब खां, रहमत खां, नवाब जलंधरी हिम्मत खां, उसमान खां, मुहम्मद कसूरी, करीम बख्श चौधरी, सभा चंद फगवाड़ीआ, फते मुहम्मद खां कुंजपुरीआ, जानी-मानी खां मोरिंडा के, सयादत अली सढौरे वाला, शमस खां बिजवाड़े का आदि। जो अलग-अलग क्षेत्रों की फौजें इस युद्ध में भाग लेने आई थीं वे इस प्रकार हैं: सरसा, रणीआ, फतिआबाद, बोहिआ, बुलाढा, आंडरू, अलवारा, समाणा, बहावलपुर, झंग, कहिलूरी, हंडूरी, कटोच, जसवाल, गुलेरी, चंबा, सुकेत, मंडी, कुल्लू, हरीपुर, नूरपुर, श्रीनगर, कैथल, दड़ोल, चंदेल, डढवाल, करोल, अरकी, भज्जी

आदि। इसके अलावा अलग-अलग सूबों तथा परगनों के बहुत-से चौधरी तथा मालगुजार गुरु जी के विरुद्ध चढ़ आए थे तथा उन्होंने श्री अनंदपुर साहिब को घेर लिया था।

पहाड़ी एवं शाही फौज ने श्री अनंदपुर साहिब को घेरा डाल लिया था जो कई महीनों तक जारी रहा। शाही फौजों का खर्च पहाड़ी रियासतों के राजाओं के जिम्मे था जिस कारण रियासतें कंगाल हो गई थीं। दूसरी तरफ किले के अंदर चाहे दाना-पानी खत्म हो गया था परंतु फिर भी गुरु जी का अकाल पुरख पर भरोसा था कि वह सच के मार्ग पर चलने वालों को खुद मार्ग दिखाता है तथा धर्म-युद्ध में डगमगाने नहीं देता। परमात्मा के उद्देश्य को मुख्य रखकर उसकी रजा में किया गया कोई भी कार्य कभी असफल नहीं होता। इसी विश्वास का सदका वे सदा अपने सिक्खों को हौंसला तथा प्रेरणा देते हुए धर्म के प्रति दृढ़ता कायम रखने पर जोर देते थे।

दुश्मन फौज में हिंदू एवं मुसलमान शामिल थे। भारी मात्रा में नुकसान होता देखकर उन्होंने किला खाली करवाने की योजना बनाई। दोनों धर्मों के अनुयाइयों ने अपने-अपने धर्म-ग्रंथों की कसमें खाकर गुरु जी को समय के अनुकूल किला खाली करने के लिए मिन्नतें की थीं। दूसरी तरफ गुरु जी के सिक्ख भी किला खाली करने पर जोर दे रहे थे। गुरु जी को सांझी फौज द्वारा खाई हुई कसमों पर बिलकुल भरोसा नहीं था और वे किला खाली करने के पक्ष में नहीं थे, परंतु फिर भी सिंघों के बार-बार कहने पर उन्होंने किला खाली करने का मन बना लिया था। अनंदपुर साहिब से चलकर गुरु जी का काफिला अभी कीरतपुर साहिब तक ही पहुंचा होगा कि 'बिल्ली थैले से बाहर आने' की लोकोक्ति के अनुसार सांझी फौज ने गुरु जी पर हमला कर दिया। परमात्मा की रजा को हमेशा मीठा करके मानने वाले गुरु जी ने अनेकों युद्ध लड़े थे, परिवार एवं खालसे को अनेकों कुर्बानियां करनी पड़ी थीं, अनेकों मुश्किलों का सामना करते हुए कठिन मार्ग पर चलने के लिए मजबूर होना पड़ा था, किंतु फिर भी अति संकट की घड़ी में उन्होंने खालसे का मनोबल कायम रखा। श्री अनंदपुर साहिब छोड़ जाने के उपरांत हुए हमले ने सिक्खों को बिखर जाने के लिए मजबूर कर दिया था, किंतु फिर भी गुरु जी ने शीघ्र जो योजनाबंदी की थी वह सांझी फौज को गुरु जी तक पहुंचने से रोकने के लिए काफी थी। खालसा, गुरु जी तथा सांझी फौज के मध्य दीवार बन गया था। सिर-धड़ की बाजी लगाकर सिक्ख सांझी फौज को गुरु जी की तरफ बढ़ने से रोक रहे थे। खालसे का जान-माल का भारी नुकसान हुआ। सरसा नदी पार करके निहंग खां के घर से गुजरते हुए गुरु जी ने चमकौर की गढ़ी में मोर्चाबंदी कर ली थी। इस युद्ध में हर एक सिक्ख सांझी फौज के मिशन को असफल करने में योगदान डाल रहा था, यहां तक कि गुरु जी के साहिबजादों--बाबा अजीत सिंघ, बाबा जुझार सिंघ ने भी अपनी शहादत देकर शत्रुओं को सफल नहीं होने दिया था। गुरु जी तब तक चमकौर की गढ़ी में चट्टान की भांति डटे रहे जब तक खालसे ने गुरु जी को पंथ के महान हितों को मुख्य रख कर चमकौर की गढ़ी छोड़ जाने के लिए मजबूर नहीं कर दिया था। उनकी इस जांबाजी तथा प्रेरणा का सदका ही था कि उस भयानक युद्ध में लड़ने की क्षमता रखने वाला कोई भी सिक्ख विरोधी फौज के काबू नहीं आया था। सबने धर्म के मार्ग पर जूझते हुए शहादतें दी थीं तथा किसी ने भी विरोधियों की बात नहीं मानी थी। चमकौर की गढ़ी में आखिरी दो

सिक्ख--भाई संत सिंघ एवं भाई संगत सिंघ इस बात की गवाही भरते हैं कि उन्होंने अपने आखिरी श्वास तक गुरु जी पर निष्ठा कायम रखी थी।

गुरु जी ने जिन हालातों का सामना किया आम मनुष्य का उस मार्ग पर चलते हुए डगमगा जाना स्वाभाविक है। परमात्मा द्वारा बख्शिश किए अनेकों पदार्थों को जल्द ही भूल कर छोटी-सी मांग पूरी न होने पर मनुष्य उसके साथ गिला करने लग जाता है। कई बार मनुष्य इतना खफा हो जाता है कि वह सदाचार का मार्ग छोड़कर दुराचार की तरफ रुचित हो जाता है। गुरु जी का प्रेरणामयी मार्ग सबके सामने है। गुरु जी हर संकट एवं स्थिति में परमात्मा का शुक्राना करते रहे तथा उसी का जाप एवं शिक्षायें ग्रहण करने पर जोर देते रहे। गुरु जी जिस मार्ग पर चल रहे थे, निश्चित ही वह जोखिम भरपूर था, परंतु उनका मिशन बिलकुल सही दिशा की ओर धर्म-मुखी तथा लोक-मुखी था। इसकी स्वीकृति इस बात से होती है कि चमकौर साहिब की गढ़ी छोड़ जाने के पश्चात वे जिन गांवों से गुजर रहे थे, बड़ी संख्या में लोग उनके श्रद्धालु बनते जा रहे थे। श्री मुकतसर साहिब का युद्ध चमकौर के युद्ध से कुछ समय बाद ही हो गया था। उस युद्ध में बेदावा दे गए चालीस सिक्खों के अलावा बड़ी संख्या में उस इलाके के सिक्खों ने शामिल होकर दुश्मन को जंग का मैदान छोड़कर जाने के लिए मजबूर कर दिया था। गुरु जी की नीति तथा हाकिमों की अनीति को लोगों ने अच्छी तरह से समझ लिया था तथा कुछ इलाकों के चौधरियों ने अपने हाकिमों के फरमान को रद्द करके गुरु जी का साथ देने का एलान कर दिया था। एक घटना में जब सरहिंद के नवाब वजीर खां को इस बात का पता चला कि मालवे के इलाके के चौधरी लखमीर तथा समीर गुरु जी का साथ दे रहे हैं तो उसने उनको गंभीर परिणाम भुगतने की चेतावनी दी जिसको चौधरियों ने रद्द करते हुए कहा कि "खान साहब! हमारे गुरु विचरण करते हुए यहां आ गए हैं। जिस प्रकार आप अपने पीरों की सेवा करते हो उसी तरह हम भी अपने गुरु जी की सेवा करते हैं। तुमने जो लिखा है कि आप भी गुरु जैसा बनना चाहते हो, तो इतने बड़े भाग्य हमारे कहां जो गुरु जैसे बन जायें।" इसी तरह गुरु जी तलवंडी साबो के चौधरी भाई डल्ले के पास निवास कर रहे थे तो वजीर खां यह सुनकर बड़े क्रोध में आ गया। उसने तुरंत धमकी भरे लहजे में भाई डल्ले को लिखकर भेजा था कि "गुरु जी को पनाह देना बादशाह के साथ शत्रुता मोल लेने वाली बात है, इसलिए तेरे लिए यही योग्य है कि गुरु जी को पकड़कर ले आ, नहीं तो तेरी गढ़ी की ईंट से ईंट बजाकर तुझे तेरे गुरु सहित पकड़ लाऊंगा।" लेखक बताता है कि वजीर खां की इस चिट्ठी के जवाब में भाई डल्ले ने वीरतापूर्वक लिख भेजा था कि "पहले ही तूने गुरु जी के प्रति कोई कसर नहीं रखी और अब भी न रखना। गुरु मेरे प्राणों के साथ हैं। तेरे लशकर को वही हाथ दिखाएंगे। एक को भी जिंदा नहीं जाने देंगे।" गुरु जी के धर्म-प्रचार तथा प्रसार का प्रभाव चारों तरफ नजर आने लगा था। मालवा क्षेत्र के लोग बड़ी संख्या में उनके श्रद्धालु बन गए थे तथा उनमें से भारी संख्या में अमृत छककर सिंघ भी सजते जा रहे थे।

शेष अगले अंक में . . .

अगम्य पुरुष श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी : मौलवी बूटेशाह की दृष्टि में

*-डॉ. जगजीत कौर**

साहिबे-आलम, अगम्य पुरुष, मरद अगंमड़ा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन अपने आप में अद्वितीय एवं विलक्षण व्यक्तित्व है। वे केवल एक धर्म-प्रणेता ही नहीं, समाज-सुधारक ही नहीं, बल्कि समग्र मानवता को अखंड देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत कर वीरत्व व साहस की भावना से प्रेरित, सर्वकल्याण हेतु अमिट बलिदान, त्याग, परोपकार, मानव-सेवा से पूर्ण अमर जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। संसार के इतिहास में क्या कोई ऐसा धर्म प्रणेता है जो अपने आराध्य के चरणों से भक्ति-भावना की लीनता की चरम स्थिति में आत्मरत ऐसी प्रार्थना करता हो, हे प्रभु! मुझे ऐसा वरदान दो कि मैं जीवन-पर्यंत मानवता के प्रति शुभ कार्यों में लीन रहूं और जब जीवन के अंतिम निर्णायक क्षण सामने आएं तो रणभूमि में ही लड़ते-जूझते देश, कौम व धर्म के लिए अपने जीवन की बलि चढ़ा दूं:

हे रवि! हे ससि! हे करुना निधि!
मेरी अबै बिनती सुनि लीजै ॥
अउर न मांगत हउं तुम ते कछु,
चाहत हउ चित मै सोई कीजै ॥
शसत्रन सों अति ही रन भीतर,
जूझि मरों! कहि साच पतीजै ॥
संत सहाइ सदा जग माइ,
क्रिपा कर सयाम इहै वरु दीजै ॥९००॥

(दसम ग्रंथ)

अकाल पुरख वाहिगुरु ने उनकी इच्छा पूर्ण की। देश, कौम, पंथ हित उन्होंने पिता का बलिदान दिया, माता गुजरी जी शहीद हुईं, अपने चार लख्ते-जिगर धर्म हित कुर्बान कर दिए, जीवन का मनोरथ सम्पन्न हुआ, वाहिगुरु का शुक्राना किया, पुत्रों के बलिदान पर अत्यंत संतोष प्रकट किया।

"आज खास भयो खालसा सतिगुर के दरबार।" खालसा साजने का लक्ष्य आज पूर्ण हुआ। चमकौर की गढ़ी में केवल चालीस सिंघ दस लाख जालिम सेना का शौर्यपूर्ण सामना करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए तो इस महामानव ने संतोष प्रकट किया कि जिस मकसद से प्रभु ने उन्हें जगत में भेजा था और जिस मकसद से खालसा पंथ की साजना की गई थी वह लक्ष्य पूर्ण हुआ। खालसा इस योग्य हो गया है कि वह जुल्म से टक्कर ले सकता है और निरीह मानवता की रक्षा कर सकता है।

इस महाबलिदानी के लासानी, विलक्षण, बेमिसाल व्यक्तित्व को चित्रित करने की सहज जिज्ञासा हिंदू-मुस्लिम व विदेशी अंग्रेज इहितासकारों में भी रही है और अनेकों ने अपने-अपने ढंग से इनका वीरत्वपूर्ण जीवन-वृत्तांत लिखा है। इनमें सबसे प्राचीन वृत्तांत बूटेशाह मौलवी गुलाम मुहीउद्दीन द्वारा लिखित "तारीखे-पंजाब" में है।

मौलवी बूटेशाह अंग्रेज कप्तान मरे का पेशकार था। कैप्टन मरे के कहने पर ही इसने सिक्खों का इतिहास लिखा था। कैप्टन मरे ईस्ट इंडिया कंपनी में फौजी डाक्टर था। यह सर डेविड आकटर लोनी, जो दिल्ली में कंपनी का राजनीतिक कार्यकर्ता था, उसके मातहत लुधियाना

**1801-C, Mission Compound, Near St. Mary's Academy, Saharanpur (U.P.)-247001, Mob. : 92197-87756*

और अंबाला में उसके लिए काम भी करता था। इसे सिक्ख इतिहास में दिलचस्पी थी। इसने 'महाराजा रणजीत सिंघ' नामक पुस्तक भी लिखी थी। यह महाराजा रणजीत सिंघ के दरबार लाहौर में दिसंबर १८२६ से मार्च १८२७ ई तक रहा। महाराजा के साथ अपनी बातचीत यह चिट्ठियों द्वारा अंग्रेज सरकार को भेजता था जिसमें से अधिकांश सामग्री बाद में 'The Punjab Sovereign State' पुस्तक में छपी, जो महाराजा की शान में है और पढ़ने योग्य है।

इसी कप्तान मरे ने अपने पेशकार लुधियाना स्थित मौलवी बूटेशाह को सिक्ख पंथ का इतिहास लिखने को कहा। बाद में 'प्राचीन पंथ प्रकाश' (कृत भाई रतन सिंघ) इसी आधार पर लिखा गया। भाई रतन सिंघ (भंगू) को ऐसा लगा कि मौलवी बूटेशाह ने सिक्ख पंथ का इतिहास ठीक बयान नहीं किया होगा इसलिए उन्होंने संवत् १८६६ में 'प्राचीन पंथ प्रकाश' लिखा और सिक्ख संगत के लिए वही छंद रचना ग्रंथ के रूप में संवत् १८९८ में प्रकाशित की। भाई रतन सिंघ सरदार महिताब सिंघ मीरांकोटीए के पोते, सरदार राय सिंघ के पुत्र तथा सरदार शिआम सिंघ करोड़ीए के नाती थे। इनका देहांत संवत् १९०३ (सन् १८४६) में हुआ। इनकी संतान अब जिला लुधियाना की तहसील समराला के गांव भड़ी में है।

भाई रतन सिंघ की रचना छंदानुसार नियमबद्ध नहीं थी, इसलिए ज्ञानी गिआन सिंघ, जो लौंगोवाल निवासी थे, ने उसमें और प्रसंग जोड़कर नया 'पंथ प्रकाश' संवत् १९२४ में रचा जिसकी पहली एडीशन संवत् १९४७ में छपी है। इस प्रकार बूटेशाह का महत्व इस दृष्टि से अत्यंत आदरणीय है कि उन्होंने पंथक इतिहास की रचना में योगदान दिया।

मौलवी बूटेशाह दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन-वृत्तांत लिखते हुए बताता है कि गुरदेव जी का जन्म बिहार के शहर पटना साहिब में २२ दिसंबर सन् १६६६ को माता गुजरी जी की कोख से हुआ। शहादत के बाद जब श्री गुरु तेग बहादर साहिब का पावन शीश भाई जैता जी दिल्ली से उठाकर अनंदपुर साहिब ले आए तो भाई जी को गुरु साहिब ने गले से लगा लिया और 'रंगरेटा गुरू का बेटा' कह कर सम्मानित किया। इसके बाद गुरु साहिब ने 'पंथ' साजने का निर्णय पक्का कर लिया। दूर-दूर तक हुकमनामा भेजा, सिक्ख संगत को वैसाखी के दिन अनंदपुर साहिब इकट्ठा होने का हुक्म दिया। अस्सी हजार के करीब सिक्ख श्रद्धालु एकत्रित हुए। एकत्रित जनसमूह को एक ऊंचे टीले पर खड़े होकर गुरु साहिब ने सम्बोधित किया और बताया कि "अब जुल्म की अति हो चुकी है, अत: इसके मुकाबले के लिए फौजी जीवन अपनाया जाए। मैं चाहता हूं कि हमारे जीवन का निशाना एक ही हो और उसके लिए हमें एक ही प्रकार की जीवन-पद्धति में बांधा जाए; *'यक वतीरा कारबंदीद'* एक ही धर्म को धारण करें और द्वैत भावना का त्याग करें। *'यक मजहब दर आइंद कि दूई अजमया बरखेजद'*। चारों वर्ण--ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र धर्म-भेद का त्याग कर एक ही पंथ पर चलें। आज सभी अमृत-पान करें और एक ही स्थान पर बैठकर सभी एक साथ 'प्रसाद' छकें।" इतना सुनना था कि कई जातिवादी उठकर खड़े हो गए और कहने लगे कि "हम अपना पुश्तैनी धर्म नहीं त्याग सकते।" वहां से कई चले गए पर फिर भी २० हजार प्राणियों ने अमृत-पान किया। जब अमृत का पात्र तैयार हो रहा था तो गुरु जी के महिल (सुपत्नी) ने आकर तैयार अमृत में बताशे डाल दिए। गुरु साहिब ने खुशी जाहिर की कि स्त्री की

उपस्थिति ऐसे शुभ अवसर पर इस बात का प्रतीक है कि यह पंथ खूब चलेगा। स्त्री ईमानदारी और त्याग का प्रतीक है जो धर्म को जिंदा रखती है। बताशों की मिठास इस बात का प्रतीक है कि मीठे व्यवहार से पंथ, देश-देशांतर पर अधिकार प्राप्त करेगा : *"सिक्खां रा दहान शीरी शबद व बर तबाअ रिआसत रसीद व मुलकी बदसत।"*

पांच प्यारों को अमृत छकाने के बाद गुरु जी तख्त छोड़कर, हाथ जोड़ कर उनके सामने आ खड़े हुए और प्रार्थना की कि जिस प्रकार मैंने आपको अमृत छकाया है उसी तरह आप मुझे भी अमृत की दात बख्शें। सबको सम्बोधित करते हुए गुरु जी ने कहा कि आज से कोई ऊंचा नहीं, कोई नीचा नहीं, कोई कुल का अभिमान नहीं करेगा, सभी एक ही धर्म को मानेंगे; सबको हर समय सावधान रहने को कहा; दसतार हर समय धारण करे रखें।

इस प्रकार गुरु जी ने अमृत छकाकर कहा कि अब खालसा पंथ प्रकट हो गया है। *"ई फिरका जाहर शुद।"* लोग कीमती भेंटा लेकर हाजिर होने लगे। गुरु जी को बहुमूल्य तेग, सफेद बाज, इराकी घोड़ा, शाही हीरे-मोतियों से जड़ा शामियाना, पंच कला शस्त्र, मुक्ता हाथी भेंट में आया देख पहाड़ी राजा ईर्ष्या करने लगे। गुरु जी ने समझा कि अब युद्धों का समय आ गया है, अच्छी फौज भी तैयार हो चुकी थी। नाहन के पहाड़ी राजा मेदनी प्रकाश के बुलावे पर गुरु जी परिवार सहित नाहन आए। यमुना नदी के किनारे एक मजबूत किला बनाया गया, नाम रखा 'पाउंटा साहिब'--*"आं जा किला दर गाइत असतवारी बणा करद पाउंटा मोसूम साखत।"*

कहिलूर के राजा के लड़के का रिश्ता फतेह शाह की लड़की से तय हुआ। उसने सेना सहित बारात पाउंटा साहिब के रास्ते ले जाने की आज्ञा चाही। गुरु जी ने सेना के लिए मना कर दिया पर लड़का-लड़की पाउंटा साहिब के रास्ते गए। इस पर पहाड़ी राजाओं ने बुरा माना और शादी के तुरंत बाद भंगाणी का युद्ध हुआ। कुछ पठान, जो पहले गुरु जी के साथ थे, लड़ाई के समय पहाड़ी राजाओं से जा मिले। गुरु साहिब की फौज इतनी बहादुरी से लड़ी कि अफगानों के सारे आगू, जिनमें काले खान, भीखन खान, नजाबत खान, हयात खान और जौहर खान थे, सब मारे गए और पहाड़ी राजा भी हार कर भाग गए। हरीचंद हंडूरीआ, जो फसाद की जड़ था, गुरु जी के हाथों मारा गया--*"हरी चंद हंडूरीआ कि बाइस फितना व फसाद शदह बूद नीज कुसता आमद।"*

गुरु साहिब अनंदपुर साहिब आ गए क्योंकि अब अनंदपुर साहिब की रक्षा अनिवार्य हो गई थी। यहां गुरु जी ने अनंदगढ़, लोहगढ़, फतहगढ़ और मुकतगढ़ नामक किले बनाए। पहाड़ी राजाओं ने गुरु जी को अपने बलबूते पर हरा पाना कठिन समझा, फलतः उन्होंने मुगल बादशाह औरंगजेब को प्रार्थना की। उसने लाहौर के सूबेदार जबरदसत खान और सरहिंद के हाकिम शमस खान को अनंदपुर साहिब पर हमला करने का आदेश दिया। पहाड़ी राजाओं की सम्मिलित सेना ने सात महीने तक अनंदपुर साहिब को घेरा डाले रखा। सिक्ख पहले तो खूब बहादुरी से लड़ते रहे परंतु धीरे-धीरे कुछ सिक्ख भूख से तंग होकर किला छोड़कर चले गए, कुछ बेदावा लिख कर चले गए।

इसी बीच अनंदपुर साहिब में पहाड़ी राजाओं ने एक मस्त हाथी को शराब पिला कर किले का दरवाजा तोड़ने को भेजा। गुरु महाराज जी ने भाई बचित्तर सिंघ नामक वीर बहादुर को थापड़ा देकर मुकाबले के लिए भेजा।

भाई साहिब ने हाथी को मार भगाया--*"बाअद आ बचितर सिंघ नामी अजाजत महारबा दादंद।"* इसके बाद गुरदेव चालीस सिंघों के साथ चमकौर की गढ़ी में पहुंचे। महाराज ने सिंघों से कहा कि समय आ गया है, कमरकस्से करके रुस्तम की तरह जंगे-मैदान में लड़ कर शहीदी प्राप्त करें। गिरा हुआ खून कभी व्यर्थ नहीं जाता, खून एक दिन रंग लाएगा--*"ई खून हाई शूमा जाइआ न ख्वाहद।"*

सिंघों ने गुरु जी को हुक्म दिया कि सिंघ तो लड़कर शहीदी प्राप्त कर लेंगे लेकिन हालात के मद्देनज़र वे गढ़ी छोड़कर चले जायें। तब भाई संगत सिंघ नामक एक सिंघ, जिसके नैन-नक्श गुरु जी से मिलते-जुलते थे, उसे गुरु जी निजी लिबास व शस्त्र पहनाकर अंधेरे में गढ़ी से बाहर हो गए--*"संगत सिंघ नामकिदर सूरत गुरु गोबिंद सिंघ मुशाहबत तमाम दासंत गुरु साहिब लिबास व सलाअ (शसत्र) खासा खुदब दू बखशीन।"* गुरु साहिब रात भर सफर कर माछीवाड़ा पहुंचे। वहीं उन्हें चमकौर साहिब से चले सिंघ भाई नबी खान और भाई गनी खान मिले जो उन्हें "उच्च दा पीर" बनाकर सुरक्षित स्थान पर ले गए। भाई गुलाबा नामक सिक्ख ने उन्हें अपने घर थोड़ी देर ठहराया। तब वे कुंजपुरा (कनेच) पहुंचे और आलमगीर होते हुए जटपुरा पहुंचे। यहां संगत गुरु-दर्शन के लिए उमड़ पड़ी। यहां 'कपूरा' ने गुरु जी की सेवा की। कपूरा ने ही खबर दी कि मुगल सेना उनका पीछा करती आ रही है। गुरु जी दिलावर मर्द थे। वे डरे नहीं, मुकाबला करने को डट गए--*"गुरू गोबिंद सिंघ मरद दिलावर।"* वे मुकतसर साहिब में जंग के लिए डट गए। वे ऐसे मरदाऊपुने से जूझे कि हमलावर फौज के जवान तीरों की ताब न सह सके। वे मैदान छोड़कर भाग गए। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को फतह हासिल हुई। गुरु साहिब अब पूरी तसल्ली से वहां टिके। संगत दर्शन को आने लगी। घरों को भागे सिंघ फिर आ मिले। जंग में शहीद होने वाले चालीस सिंघों को गुरु जी ने 'पांच हजारी', 'दस हजारी', 'अमीरी', 'वजीरी' और 'बादशाहत' से निवाजा। अंतिम सांसें गिनते भाई महां सिंघ की प्रार्थना पर बेदावा फाड़ा गया।

गुरु जी की विजय का समाचार सुनकर औरंगजेब परेशान हो उठा। गुरु जी ने दीनाकांगड़ नामक स्थान से 'जफरनामा' लिखकर उसे भेजा। उसे झंझोड़ा कि कैसे वह दरवेशों से ज्यादती करता रहा। गुरु साहिब ने बताया कि कैसे उनका सारा जीवन संघर्ष में ही गुजरा है-*"रिंज ओ कशाकशी जमाना रीजी दीगर ब चशम मन आमद चूं।"*

'जफरनामा' का गहरा प्रभाव औरंगजेब पर पड़ा। वह समझ गया कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महज दरवेश हैं और उसने दरवेशों के साथ न्याय नहीं किया है--*"दरवेश बेश ने सत।"* उसने तुरंत भाई दया सिंघ और भाई धरम सिंघ के हाथ पत्र का उत्तर भेजा। गुरु साहिब को दक्षिण भारत आने का निमंत्रण दिया और सरहिंद के नवाब तथा अन्य हाकिमों को विशेष फरमान भेजा कि गुरु साहिब पर किसी प्रकार का प्रतिबंध न लगाएं। वे जहां जाना चाहें उन्हें जाने दें--*"ब आमल सरहिंद वगैरा दर बाब अदम मजाहमत।"* गुरु साहिब अभी दक्षिण को चले ही थे कि औरंगजेब का देहांत हो गया। उसका बेटा बहादुर शाह गद्दी पर बैठा। बहादुर शाह ने गुरु जी से क्षमा मांगी।

दक्षिण में वे माधोदास बैरागी से मिले, जिसे अमृत छका कर 'बंदा सिंघ' नाम देकर पंजाब की ओर भेजा। आप स्वयं नांदेड़ में ठहरे जहां वजीर खां द्वारा भेजे गए उनकी सेवा में रत दो पठानों ने मौका पाकर कटार से मारू

हमला किया। एक को तो गुरु जी ने वहीं झटक दिया, दूसरा भाग निकला। खून काफी बह चुका था। जख्म धो-पोंछ कर सिल दिए गए, पर एक दिन प्रत्यंचा चढ़ाते वक्त वे जख्म फट गए, रक्त-स्राव हुआ। गुरु जी ने अकाल पुरख का बुलावा आया समझ श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब को गुरुता प्रदान की और स्वयं परम ज्योति में विलीन हो गए। अब नांदेड़ को 'अबिचल नगर' कहते हैं जिसका अर्थ है- 'सदा कायम रहने वाला'--*"शहर नांदेड़ कि अकाल सिंघा अज खी ताअ जीम अबचल नगर याअनी कि दवांम काइम।"*

इस प्रकार बूटेशाह ने साहिबे-आलम श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन अत्यंत श्रद्धा-भाव से अंकित किया है।

महत्वाकांक्षी बनो

*-बीबी जसप्रीत कौर 'जस्सी'**

बहुत कम लोग ऐसे होते हैं जो सचमुच महत्वाकांक्षी होते हैं। क्षुद्र से तृप्त हो जाने वाले महत्वाकांक्षी नहीं होते, अपनी मंजिल को जो जाते हैं वे ही महत्वाकांक्षी होते हैं।

हमें जीवन को एक लक्ष्य देना चाहिए और हृदय को महत्वाकांक्षी बनाना चाहिए। स्वयं को ऊंचाइयों के स्वप्नों से भर लेना चाहिए। बिना लक्ष्य के हमारी शक्तियां बिखरी रहती हैं। साधारणतया हम टुकड़ों में बिखरे रहते हैं। हमारी कुछ ऊर्जा का अवशोषण क्रोध द्वारा, कुछ हमारे लोभ द्वारा और कुछ वासना द्वारा होता है और यह सिलसिला चलता ही रहता है। चारों ओर हम इच्छाओं से घिरे रहते हैं और फिर ऊर्जा-विहीन हो जाते हैं, खोखले और खाली-खाली हो जाते हैं। हमारे पास कोई ऊर्जा शेष नहीं रह जाती।

हमें अपनी शक्तियों को एकत्रित करके एक लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए और फिर उस लक्ष्य को समर्पित हो जाना चाहिए। मानव-जीवन का वास्तविक लक्ष्य है प्रभु-प्राप्ति कर जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त होना। जो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को उपलब्ध हो जाता है वही अपने जीवन में खुशियां भर सकता है, असली शांति उसे ही मिलती है। जमीन में दबा बीज अपनी शक्तियों को इकट्ठा कर भूमि के ऊपर उठता है। सूर्य के दर्शन की प्यास उसे अंकुर बनाती है। उसी तरह प्रबल इच्छा से ही वह स्वयं को तोड़ता है और बीज के आवरण से बाहर आता है। हमें बीज की भांति बनना है। परमात्मा को पाने के लिये, अपनी मंजिल को पाने के लिये, अपने जीवन-लक्ष्य को पाने के लिए हमें अपनी सारी शक्तियों को सद्मार्ग पर लगाना है। इसके बाद जीवन में एक क्षण ऐसा भी जब हम माया के आवरण को तोड़कर प्रभु-दर्शन पा सकेंगे। इसके लिए हमारे अंदर महत्वाकांक्षा का होना बेहद जरूरी है।

**मकान नं: ११, सेक्टर १-ए, गुरु ज्ञान विहार, डुगरी, लुधियाना।*

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की उपमा-वाचक नामावलि

-डॉ. नवरत्न कपूर*

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी (सन् १६६६-१७०८ ई) उच्च कोटि के विद्वान, महान योद्धा, कुशल संगठनकर्ता तथा सुविख्यात युग-प्रवर्तक थे। सिक्ख इतिहास और सिक्ख विद्वानों एवं उनके श्रद्धालु कवियों ने उन्हें विभिन्न उपमा-वाचक संज्ञाओं से अभिहित किया है। ऐसे स्तुति-परक नामों की झलकियां पेश हैं :

१. आनंद के दाता : नौवें गुरु साहिब श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने 'माखोवाल' नामक ग्राम, जो कि सतलुज नदी के तट पर स्थित था, की जमीन खरीद कर संवत् १७२३ (सन् १६६६ ई) में पंजाब का प्रसिद्ध धार्मिक केंद्र 'श्री अनंदपुर साहिब' नामक नगर बसाया था। सिक्ख गुरु साहिबान के जीवन-चरित लेखकों का कथन है कि चारों ओर सुरम्य पहाड़ियों के मध्य बसाए गए इस नगर में संस्थापक श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने व्यापारियों के लिए बाजार बनवाए और बाहरी क्षेत्र में श्रद्धावनत किसानों को खेतीबाड़ी का कार्य सौंप कर 'जंगल में मंगल' कर दिया। इस संबंध में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवि भाई मंगल राय का कथन है :

आनंद दा वाजा नित वज्जदा अनंदपुर,
सुण सुण सुध भुल्लदी ए नर नाह दी।

अर्थात् अनंदपुर साहिब में सदैव हंसी-खुशी का वातावरण रहता था, जिसे देख-सुनकर राजा-महाराजा (नर-नार) भी मस्ती में झूम उठते थे।

आरंभ में इस नगर का नाम श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अपनी पूज्य मां माता नानकी जी के नाम पर 'चक्क नानकी' रखा था। पटना (बिहार) में जन्मे गुरु साहिब के एकमात्र सुपुत्र श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के इस नगर में अपनी मां माता गुजरी जी के साथ आने पर 'चक्क नानकी' की जनता के हृदय में मानो 'आनंद का सागर' फूट पड़ा और इस पवित्र गुरु-नगरी को उपयुक्त अर्थवत्ता प्राप्त हो गई। पसरूर (जिला सियालकोट, वर्तमान पाकिस्तान) में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महिमा सुनकर उनकी शरण में आए उनके दरबारी कवि भाई मंगल राय ने पुन: अपने आश्रयदाता को 'आनंद के दाता' की उपमा अपनी मनोहर काव्य-रचना में इस प्रकार भेंट की है :

पूरन पुरख अवतार आन लीन आप,
जां कै दरबार मन चितवहि सो पाईए।
नौमे गुर नंद, जग बंद तेग, तयाग पूरे,
'मंगल' सुकवि कहि मंगल सु थांईए।
'आनंद को दाता' गुरु साहिब गोबिंद राइ,
चाहै जौ अनंद तउ अनंदपुर आईए।

इसी उपमा को ध्यान में रखकर कई विद्वान लेखकों ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को 'अनंदपुर के मालिक' भी पुकारा है।

२. उच्च का पीर : चमकौर साहिब नामक स्थान पर सन् १७०४ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सेना के साथ मुगलों का घमासान युद्ध हुआ। उसमें गुरु साहिब के दो बड़े सुपुत्र-- साहिबजादा अजीत सिंघ जी तथा साहिबजादा

*९०१, टावर डी-३, सागर दर्शन टावर सोसायटी, पाम बीच रोड, सेक्टर-१८, नेरूल (नवी मुंबई)-४००७०६

जुझार सिंघ जी वीरगति को प्राप्त हुए। गुरु साहिब के कुछ अनुयायी चाहते थे कि गुरु साहिब किसी तरह गढ़ी से बाहर जाकर भारी सेना तैयार करें। उनके बार-बार जोर डालने पर भी जब गुरु साहिब न माने तो पांच प्यारों ने उन्हें 'हुकमनामा' सुना दिया। "गुरु बीस बिस्वे और संगत इक्कीस बिस्वे" की लोकोक्ति को शिरोधार्य करके गुरु साहिब ने चमकौर की गढ़ी से बाहर जाते समय ताली बजाकर दुश्मनों को अपने जाने की सूचना दी। यह चुनौती सुनकर मुगल सेना में भगदड़ मच गई। रात के अंधेरे में बहुत-से मुगल सैनिक एक-दूसरे को पहचान न सके और आपस में लड़कर कट मरे। गुरु साहिब गढ़ी से बाहर आकर एक बाग में लेट गए। उस उद्यान के मालिक भाई गनी खां और भाई नबी खां नामक दो सहृदय मुसलमान थे। गुरु साहिब उनसे घोड़े खरीदा करते थे। उन दोनों ने गुरु साहिब को पहचान लिया और उन्हें अपने घर में आराम करने के लिए चलने की प्रार्थना की। इसी बीच भाई गुलाबा नामक एक मसंद भी वहां आ पहुंचा और उसने भी गुरु साहिब को अपने निवास में विश्राम करने के लिए निवेदन किया।

दो-एक दिन के बाद मुगलिया गुप्तचर उन्हें ढूंढते हुए भाई गुलाबा के निवास के पास पहुंच गए। भाई गुलाबा की पत्नी को डर हुआ कि कहीं कोई पड़ोसी भेद न खोल दे, इसलिए उसने भाई गुलाबा से अनुरोध किया कि वह गुरु साहिब को किसी अन्य स्थल पर जाने के लिए विनती करे। पत्नी की बात से सहमत होकर बड़े शर्मीले शब्दों में भाई गुलाबे ने गुरु साहिब से प्रार्थना की : "आप तो 'बड़े पीर' हैं, हर तरह की परिस्थिति झेल सकते हैं। यदि मैं मुसीबत में फंस गया तो न रहूंगा घर का न घाट का।"

गुरु साहिब दीन-हीन भाई गुलाबे की अतिथि-भक्ति से प्रभावित थे और उसकी भावी शंका को भी पहचान गए। कानों-कान भाई गनी खां तथा भाई नबी खां को भी यह खबर मिल गई। उन्होंने गुरु साहिब को एक 'हाजी पीर' का वेश धारण करवा कर एक पलंग पर बिठाया और अपने कंधों पर पलंग उठा कर नगर से बाहर चल पड़े। उन सम्पन्न व्यापारियों से यदि कोई पूछता कि पलंग पर कौन बैठा है, तो दोनों महानुभाव धड़ल्ले से उत्तर देते : "ये तो उच्च के पीर हैं।" इस प्रकार भाई गनी खां और भाई नबी खां ने मुगल जासूसों की आंखों में धूल झोंक कर गुरु साहिब को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाया। इसी घटना के कारण श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नाम के साथ 'उच्च का पीर' की उपमा जुड़ गई।

३. कलगीधर पातशाह : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी शाही रुचियों वाले थे। वे अपनी पगड़ी पर सुंदर 'कलगी' सजाते थे, अत: वे इस उपमावाचक संज्ञा से भी विख्यात हुए। पंजाबी साहित्य जगत में 'कलगीधर' शब्द उनके नाम का पर्याय बन गया। किसी कवि ने उन्हें 'श्री कलगीधर' पुकारा है और किसी ने 'कलगीधर जी'। इस शब्द को अत्यधिक सम्मानसूचक रूप देने के लिए 'श्री कलगीधर हजूर' अथवा 'कलगीधर पातशाह' का प्रयोग भी कुछ विद्वानों ने किया है। ऐसी कुछ बानगियां प्रस्तुत हैं :

--अब आन की आस निरास भई,
कलगीधर वास कियो मन में।
(भाई संतोख सिंघ, श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

--दरसन चल्ल अनंदपुर करीए,
चलो सहीओ! अनंदपुर चलीए,
दरसन कर कर ठरिए।

इस रोशन दिल नाल सखी! गुरू गोबिंद सिंघ सिमरीए।
दरस सुहावै सै वरहिआं दे, कलगीधर दे करीए।
(भाई वीर सिंघ, कलगीधर चमतकार)

अर्थ : हे सहेलियो! आओ अनंदपुर साहिब में चलकर (गुरु साहिब के) दर्शन करके हार्दिक शांति (ठरिए) प्राप्त करें और प्रसन्न हृदय (रोशन दिल) से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का स्मरण करें। (हमारी यही प्रार्थना है कि) हमें गुरु साहिब के दर्शन सैंकड़ों वर्षों (सै वरहिआं) तक होते रहें।

कई बार कवियों ने अपनी धुन में किसी अन्य सम्मानसूचक शब्द 'स्वामी' की अभिवृद्धि भी कर दी है, यथा :

इक्क दिन गुरु गोबिंद सिंघ साहिब, 'कलगीआं वाले स्वामी'।
दासां दे रख्यक, सिक्ख पालक, प्यारिआं अंतरजामी।
कलगी जिग्हा बिराजे मत्थे, लक्क तलवार सुहावे।
मत्था तूण तीर दा भरिआ, धनुख लहिर दिखलावे। (भाई वीर सिंघ, कलगीधर चमतकार)

इस पद में कवि महोदय ने गुरु साहिब का संपूर्ण शस्त्रधारी स्वरूप प्रकट करते हुए उन्हें अपने सेवकों का रक्षक, सिक्ख-संगत का पालनकर्ता एवं पांच प्यारों के हृदय में निवास करने वाला (अंतरयामी; साक्षात भगवान् स्वरूप) माना है।

४. दशम पातशाह तथा सच्चे पातशाह : इस शब्द समुच्चय में 'दशम' शब्द संस्कृत का है, जिसका अर्थ है 'दसवें'। सिक्ख चिंतनधारा में बसे 'पातशाह' शब्द का अर्थ-बोध काफी विस्तार के साथ प्रोफेसर पूरन सिंघ ने करवाया है, यथा : 'पातशाही' का यह संकल्प मुगलों की पातशाही जैसा नहीं था, बल्कि यह तो कारलाइल के कलाधारी पातशाह की धारणा से मिलती-जुलती चीज थी, जो गुरु के मन में कारलाइल से सदियों पहले उत्पन्न हुई थी। कारलाइल की इस धारणा को पेश करने से पहले ही गुरु जी को 'सच्चा पातशाह' कहकर संबोधित किया जाता था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का नीति-तंत्र परमात्मा की आत्मिक पातशाही को जनसमूह अथवा सभी लोगों को हस्तांतरित करने का उल्लेख करता है। वह वस्तुत: 'संगत तंत्र' है। *(Spirit of The Sikh)*

'पातशाह' शब्द का प्रयोग सभी सिक्ख गुरुओं के लिए हुआ है, किंतु प्रसंग के अनुकूल उनकी गुरु-पदवी की संख्या साथ में जोड़ दी जाती है। बहुधा उनके नाम के पर्याय के रूप में 'सच्चा पातशाह' शब्द का प्रयोग किया जाता है। छंद-पूर्ति के लिए इस शब्द-युगल का पहला शब्द 'साचो' अथवा 'साचे' कर दिया गया है, यथा :

--तेग साचो, देग साचो, सूरमा सरन साचो,
साचो पातशाह गुरू गोबिंद कहायो है।
(कवि सुंदर)

--साचे पातशाह श्री गुरु गोबिंद जीउ,
भोज की सी मौज तेरे रोज रोज पाइए।
(कवि आलम)

सिक्ख गुरु-परंपरा में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का दसवां स्थान था, इसलिए उन्हें भाई केसर सिंघ छिब्बर ने भी 'दसवें पातशाह' अपनी काव्य-रचना में पुकारा है, यथा :

अगे पुरातन नउ पातशाहीआं थीं, सिक्खी चली आई।
दसवें पातशाह 'सिंघी' रलाई। (बंसावलीनामा)

अर्थात् : सिक्ख धर्म तो पहले नौ गुरु साहिबान के जीवन-काल में ही प्रचलित था, किंतु दसवें पातशाह (श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी) ने (खालसा पंथ की स्थापना के पश्चात्) सभी

सिक्खों के नाम के पीछे 'सिंघ' शब्द अनिवार्य रूप से जोड़ने की परंपरा चला दी।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की कुछ बाणियों पर 'स्री मुख वाक पातिसाही १० (दसवीं)' अंकित करके उसे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बाणी प्रमाणित किया गया है। इसी पद्धति पर भाई वीर सिंघ ने उनके लिए 'दसम गुरू' (दशम गुरु) उपमा का प्रयोग भी किया है, यथा:

दसम गुरू दे बोले सूरे, अंत आवणा काल।
अज्ज नूं आवे कल्ल नूं आवे, टले न कीतिआं टाल।
धरम लई मरना पुन्न बिसाल।
(कलगीधर चमतकार)

अर्थात् (मृत्यु से निर्भीक) दसवें गुरु साहिब के एक शूरवीर ने धर्म-युद्ध में भाग लेते समय कहा कि मनुष्य की मौत आज अथवा कल जरूर होगी (अवश्यंभावी है), अत: धर्म की रक्षा के लिए प्राण देने से बढ़कर भला और विशाल पुण्य क्या होगा!

५. *दशमेश पिता :* भाई कान्ह सिंघ नाभा के अनुसार 'दशमेश' शब्द 'दशम+ईश' दो शब्दों का संधिज रूप है। इसका अर्थ है : "सिक्खों के दसवें स्वामी श्री गुरु गोबिंद सिंघ साहिब।" सन् १६९९ की वैसाखी के दिन 'खालसा पंथ' की स्थापना के बाद से गुरु जी 'पांच प्यारों' के साथ-साथ समूचे सिक्ख समुदाय के 'पिता' कहलाने लगे थे, इसलिए कई बार उन्हें श्रद्धालु-जन 'दशमेश पिता' के नाम से भी स्मरण करते हैं।

६. *बाजां वाले :* लोकप्रचलित राय है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने पास एक 'बाज' पक्षी रखा करते थे। इसी कारण 'बाजां वाले' शब्द उनकी शोभनीक उपमा बन गई।

७. *संत-सिपाही :* श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने स्वयं अपने जीवन-लक्ष्य के बारे में लिखा है :

हम इह काज जगत मो आए ॥
धरम हेत गुरदेव पठाए ॥ . . .
धरम चलावन संत उबारन ॥
दुसट सभन को मूल उपारन ॥ (बचित्र नाटक)

इन शब्दों द्वारा उन्होंने भक्ति (संत उबारन) और शक्ति (दुसट उपारन) के समन्वय का उद्घोष किया था। इसी कारण उन्हें 'संत-सिपाही' उपमा प्रदान की जाती है।

८. *सरबंसदानी :* गुरु साहिब के दो बड़े सुपुत्र-बाबा अजीत सिंघ जी और बाबा जुझार सिंघ जी चमकौर के युद्ध में शहीद हो गए थे। उनके दोनों छोटे साहिबजादे--बाबा जोरावर सिंघ जी एवं बाबा फतह सिंघ जी ने सिक्ख धर्म के लिए सरहिंद (फतेहगढ़ साहिब) में अपना जीवन अर्पित कर दिया था। ऐसे दुखद समाचारों के बावजूद भी गुरु साहिब अपने भक्ति और शक्ति के समन्वय-मार्ग पर सुदृढ़ रहे। ऐसी उल्लेखनीय त्याग-भावना के कारण वे 'सरबंसदानी' की उपमा से भी विभूषित हुए, जिसका अर्थ है 'सर्वस्व दान करने वाले'।
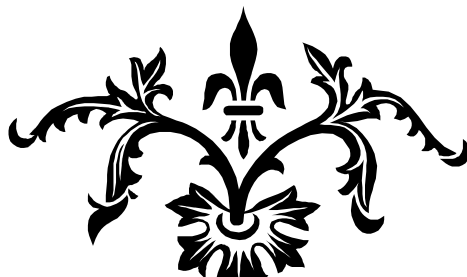
विभिन्न इतिहासकारों की नज़रों में
श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की शख्सियत के विभिन्न अंग

*-स. बिकरमजीत सिंघ**

जब अलग-अलग समय में धरती के किसी भाग पर कोई हुक्मरान कहर बरसाता है और वहां पर रहने वाले लोगों पर अत्याचार तथा जुल्म करते हुए अपनी ईन मनवाना चाहता है तो चारों तरफ स्थिति भयंकर रूप धारण कर जाती है, मजलूम जनता डर, भय और अपने ऊपर मंडरा रहे हुक्मरानी डरावने बादलों से घिर जाती है। इतिहास गवाह है कि जब-जब धरती पर रहने वाले लोगों पर किसी ने जबरदस्ती से अपना 'कानून' थोपा है तब-तब अकाल पुरख परमात्मा ने अपने किसी दैवी पुरुष को धरती पर भेज मजलूमों की रक्षा हेतु जालिम की जालिमाना कार्रवाइयों पर विराम लगाया है।

कुछ ऐसी ही स्थिति में सन् १६६६, दिसंबर माह में, पटना (बिहार) की धरती पर पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब तथा माता गुजरी जी के घर जन्म लिया एक ऐसे महापुरुष ने जिसने कुछ ऐसी मिसालें कायम कर दीं जो पूरी दुनिया के इतिहास में लासानी हैं। उस महापुरुष का नाम है श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी, जिनमें संत और सिपाही के संयुक्त गुण थे।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि मई, १६७५ में कश्मीरी पंडितों का एक जत्था अनंदपुर साहिब में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास आया। जब उन्होंने मुगलों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों की दास्तां गुरु जी को सुनाई तो श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने फरमाया कि "इस समय मुगलों के अत्याचारों को रोकने के लिए किसी महान पुरुष के बलिदान की आवश्यकता है।" यह बात सुनकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बोले, "पिता जी! इस कार्य के लिए आप से बढ़कर और महापुरुष कौन हो सकता है?" श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बात पर गौर करते हुए श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने नवंबर ११, १६७५ को धर्म की रक्षा हेतु अपना बलिदान दे दिया। उनके बाद दसवें गुरु के रूप में गुरगद्दी पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी विराजमान हुए। गुरगद्दी पर विराजमान हो जाने के उपरांत श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने धर्म की रक्षा हेतु तथा मुगलों के जुल्मों, अत्याचारों को रोकने के लिए खालसा पंथ की सृजना कर जो कार्य किए वे दुनिया के इतिहास में उनकी शख्सियत को एक ऐसी जगह पर ले गए जिसकी मिसाल धरती तो क्या पूरे ब्रह्मांड में भी नहीं मिलती, जिन्होंने समय की हकूमत के जुल्मों के विरुद्ध अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया।

आधुनिक युग के अलग-अलग इतिहासकारों ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महान शख्सियत को अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार कलमबद्ध किया है। उन्होंने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखते हुए उनकी जो तसवीरें खींची हैं वे मात्र एक प्रयत्न ही हो सकती हैं, जबकि गुरु जी की शख्सियत इनसे कई गुणा बड़ी है।

डॉ. ए. सी. अरोड़ा अपनी पुस्तक 'पंजाब का

*S/o S. Ranjeet Singh, H.No. 2946/7, Bazar Loharan, Chowk Lashmansar, Sri Amritsar. Mob: 94788-96372

इतिहास' में गुरु जी की शख्सियत के बारे में लिखते हैं, "गुरु गोबिंद सिंघ जी पंजाब के इतिहास के सबसे महान और आकर्षक व्यक्तियों में से एक माने जाते हैं। उनमें उच्च कोटि के मनुष्य, उत्तम संगठनकर्ता, बलवान सेनानायक, योग्य विद्वान, कवि और महान आध्यात्मिक नेता के गुण विद्यमान थे।"

प्रो. हरबंस सिंघ के कथन के मुताबिक, "वे (गुरु जी) एक महान गुरु और मानवता का उद्धार करने वाले सच्चे सुधारक थे . . . जिन्होंने लोगों को ईश्वर की महिमा और रजा का ज्ञान करवाया।"[१]

गुरु साहिब निस्संदेह बहुपक्षी प्रतिभा के स्वामी थे। उनकी शख्सियत अत्यंत प्रभावशाली थी। मुस्लिम इतिहासकार एस. एम. लतीफ ने भी गुरु साहिब की बहुपक्षी शख्सियत की तरफ संकेत करते हुए कहा है कि "उनमें एक धार्मिक नेता और योद्धा के गुणों का सुमेल था। वे गुरगद्दी पर बैठे एक कानूनदाता, रणभूमि में एक सेनानायक, मसनद पर बैठे एक बादशाह और खालसा समाज में एक फकीर थे।"[२]

उदार एवं सहनशील : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का एक बहुत बड़ा गुण यह था कि वे धार्मिक विचारों में बहुत ज्यादा उदार और सहनशील थे। चाहे मुगल सम्राट औरंगजेब ने अपनी धार्मिक कटुता के चलते गुरु साहिब के पिता जी को शहीद करवा दिया फिर भी मुस्लिमों के प्रति उनके दिल में घृणा-भाव नहीं था। गुरु साहिब के उदार और सहनशील होने के कारण पीर मुहम्मद बुद्धू शाह, निहंग खान, नबी खां और गनी खां जैसे मुस्लिम गुरु जी के निकटवर्ती रहे तथा गुरु जी के सिक्ख होने के नाते उन्होंने संकट के समय गुरु जी की सहायता भी की।

कवि और विद्वान के रूप में : डॉ. ए. सी. अरोड़ा के कथन के मुताबिक "गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने समय के एक महान विद्वान और प्रतिभाशाली कवि थे। उनको पंजाबी, हिंदी, संस्कृत, फारसी इत्यादि भाषाओं का ज्ञान था। एक सुयोग्य गद्य-लेखक होने के साथ-साथ वे उच्च कोटि के कवि भी थे।"[३] उनके द्वारा लिखित बहुत-सा साहित्य सरसा नदी में विलुप्त हो गया। वर्तमान समय में मौजूद गुरु जी की बाणी को पढ़ कर लगता है कि गुरु साहिब अनुपम साहित्यक योग्यता के स्वामी थे।

संगठनकर्ता के रूप में : डॉ. इंदू भूषण बैनर्जी के कथन के मुताबिक "गुरु गोबिंद सिंघ जी एक उत्तम निर्माता एवं संगठनकर्त्ता थे।"[४] इसका सबसे बड़ा प्रमाण गुरु साहिब द्वारा खालसा की सृजना करना है। गुरु साहिब ने यह अनुभव किया कि उनके देशवासी मुगलों के अत्याचारों का शिकार बने हुए हैं और आपसी भेदभाव के कारण वे हिम्मत, दिलेरी तथा आत्म-विश्वास खो बैठे हैं। उनमें बहादुरी, एकता और देश-भक्ति की भावनाएं पुनः जागृत करने के लिए गुरु साहिब ने खालसा पंथ की नींव रखी। इस संगठन के फलस्वरूप तथाकथित नीच समझी जाने वाली जातियों को नया जीवन प्राप्त हुआ और खालसा पंथ के अनुयाइयों में उत्साह पैदा हुआ।

सेनानायक के रूप में : डॉ. ए. सी. अरोड़ा लिखते हैं कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी एक बहादुर योद्धा और महान सेनानायक थे। गुरु साहिब भिन्न-भिन्न शस्त्रों का प्रयोग करना अच्छी तरह से जानते थे . . . पाउंटा साहिब में अपने सिक्खों को सैनिक शिक्षा देकर गुरु साहिब ने धीरे-धीरे बहादुर सिक्खों की एक सेना कायम कर ली . . . गुरु साहिब के योग्य

और कामयाब सेनानायक होने का सबसे बड़ा सबूत इस बात से मिलता है कि अपने सीमित साधनों और कुछ मात्र सैनिकों के साथ उन्होंने कई वर्षों तक विशाल एवं शक्तिशाली मुगल सेना का सफलतापूर्वक विरोध किया। चमकौर साहिब की जंग में उनके मात्र ४० सिक्खों ने दुश्मनों के हजारों सैनिकों का जिस हिम्मत, दिलेरी और बहादुरी के साथ मुकाबला किया उसकी मिसाल अन्यत्र मिलनी मुश्किल है। खिदराणे (मुकतसर) की जंग में मुगलों की सेना की संख्या सिक्खों से पांच गुना से भी अधिक थी फिर भी वे सिक्खों से बुरी तरह हार गए . . एक सुयोग्य सेनापति की तरह गुरु साहिब जानते थे कि दुश्मनों से कब, कहां और कैसे युद्ध करना है . . . अनंदपुर साहिब में उन्होंने चार किले बनवा कर वहां पर सुरक्षा के प्रबंध मजबूत कर लिए थे।[५]

ध्यानपूर्वक देखा जाए तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गुरु जी की सभी सैनिक कार्रवाइयों के पीछे उनका उद्‌देश्य धार्मिक ही था। उन्होंने खालसा पंथ की सृजना और मुगलों के खिलाफ युद्ध धर्म की रक्षा के लिए ही किए थे। उनके युद्ध वास्तव में धर्म-युद्ध थे। अपने सिक्खों को सैनिक शिक्षा देने के साथ-साथ गुरु साहिब सदैव उनको धार्मिक शिक्षा भी देते रहे। गुरु साहिब अपने सिक्खों को उपदेश देते रहे कि हर समय सर्वोत्तम और सर्वशक्तिमान ईश्वर का जाप (सिमरन) करो; काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से बचो। उन्होंने अपने से पूर्व गुरु साहिबान की भांति बाणी-रचना भी की जो 'दसम ग्रंथ' में दर्ज है। उन्होंने आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नवम पातशाह की बाणी को शामिल तथा उसकी पुनर्संपादना कर उसे अंतिम रूप दिया। तलवंडी साबो में गुरु जी ने सिक्ख धर्म का बहुत जोर-शोर से प्रचार किया और मालवा प्रदेश के बहुत-से लोगों को सिक्ख बनाया।

डॉ. हरी राम गुप्ता के मुताबिक, "गुरु साहिब के आदर्श और कारनामे उनके समय में ही लोगों के धार्मिक, सैनिक और राजनीतिक जीवन में अद्‌भुत परिवर्तन ले आए।"[६]

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की केवल पंजाब व भारत के इतिहास के ही नहीं बल्कि विश्व के इतिहास के भी सबसे महान और उत्तम नायक हैं।

पाद टिप्पणियां एवं हवाले :

1. Guru Gobind Singh, Harbans Singh, p.164-65.
2. History of the Punjab, S.M. Latif, p. 270.
3. History of Punjab, Dr. A.C. Arora, p. 150.
4. Evolution of the Khalsa, I.B. Bainergee, p.159.
5. History of Punjab, Dr. A.C. Arora, p. 150-51.
6. History of Sikh Gurus, H.R. Gupta, p. 147
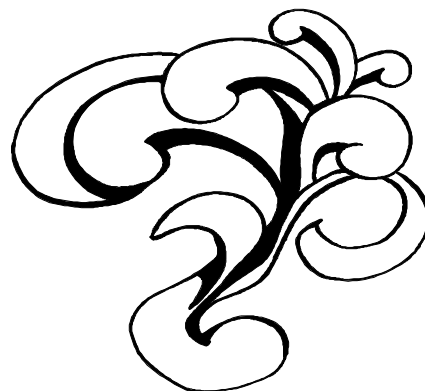
सिक्ख इतिहास में पटना साहिब का स्थान

-डॉ. दीनानाथ शरण*

सिक्खों के इतिहास में पटना साहिब का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि पटना साहिब में दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म हुआ; यहीं उनके बचपन के छः-सात वर्ष व्यतीत हुए। पटना साहिब को श्री गुरु नानक देव जी का चरण-स्पर्श भी प्राप्त है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी मई, १६६६ में यहां की मिट्टी को पावन किया। यही कारण है कि आज भी सारे विश्व के सिक्खों के बीच पटना साहिब का स्थान बड़ा ही सम्माननीय है। विशेष रूप से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जन्म-दिवस पर लाखों सिक्ख-श्रद्धालु 'पटना साहिब' आकर अपनी श्रद्धा निवेदित करते हैं।

सूबे बिहार की राजधानी 'पटना' भारत के अत्यंत प्राचीन और ऐतिहासिक महत्व के शहरों में रहा है। यही 'पटना' अर्थशास्त्र के रचयिता कौटिल्य, सम्राट अशोक, महान व्याकरणाचार्य वररुचि, योगशास्त्र के महर्षि पतंजलि और प्रख्यात गणितज्ञ आर्यभट्ट जैसी महान विभूतियों की जन्म-भूमि और कर्म-भूमि रही है, प्रेरणा-भूमि रही है।

इतिहास की उथल-पुथल के बीच 'पटना' के नाम बदलते रहे--कुसुमपुत्र, पाटलिपुत्र, पाटल, अजीमाबाद, पटना। सिक्खों के महान गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की जन्म-भूमि होने के कारण आज इसका नाम 'पटना साहिब' है। रेलवे स्टेशन का नाम भी 'पटना साहिब' रखा गया है।

आज 'पटना' शहर चाहे बदहालियों के दौर से गुजर रहा हो लेकिन 'पटना' का अतीत बहुत ही गौरवशाली रहा है। ग्रीक राजदूत मेगास्थनीज यहां की भव्य इमारत को देखकर हैरत में पड़ गया था। चीनी-यात्री ह्यूनसांग और फाहियान ने भी शहर की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सिक्खों के इतिहास को एक नया मोड़ दिया। सिक्ख अब वीर-योद्धा के रूप में उभर कर सामने आये। लोक-प्रसिद्ध है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कलम के ही नहीं, तेग के भी धनी थे। उन्होंने सिक्खों को जुझारू बनाया। वे तेग की शक्ति में गहरी आस्था रखते थे।

अत्यंत स्वाभाविक है कि जिस पटना साहिब में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जन्म लेकर सारी दुनिया में अपनी प्रकाश-ज्योति फैलायी उस पटना साहिब को हम सब श्रद्धा के साथ नमन करते हैं।

*दरियापुर गोला, बांकीपुर, पटना साहिब-८००००४ (बिहार)

सिक्ख चिंतन : सर्वधर्म-समभाव की दृष्टि

*-डॉ. महीप सिंघ**

सम्पूर्ण सिक्ख चिंतन का आधार श्री गुरु ग्रंथ साहिब हैं। यह पावन ग्रंथ सर्वधर्म-समभाव का एक अद्भुत उदाहरण है। संसार के सभी धर्म-ग्रंथों में जो संदेश और उपदेश संगृहीत हैं उनमें मानव-मात्र के कल्याण, व्याधियों से मुक्ति और प्रभु-मिलन की कामना की गई है। सभी धर्म-ग्रंथों में उस धर्म के प्रवर्तक आदि के दैवी ज्ञान का संकलन होता है और उसके बताए प्रभु-प्राप्ति के मार्ग का अनुसरण करने का आग्रह होता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संकलन-संपादन कुछ अलग प्रकार का है। इसमें छः सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा रचित बाणी के साथ देश भर में फैले हुए पंद्रह भक्त साहिबान की, ग्यारह भट्ट साहिबान की तथा गुरसिक्खों की बाणियां सम्मिलित हैं। इन बाणीकारों में सुदूर बंगाल के संस्कृत के भक्त जैदेव जी हैं; आज के उत्तर प्रदेश के भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त भीखण जी, मध्य प्रदेश के भक्त सैण जी, राजस्थान के भक्त धंना जी, सिंध के भक्त सधना जी और महाराष्ट्र के भक्त नामदेव जी, भक्त परमानंद जी तथा मुलतान (पाकिस्तान) के शेख फरीद जी की बाणी भी संगृहीत है।

जिस युग में श्री गुरु ग्रंथ साहिब को लिपिबद्ध किया गया था वह युग धर्मों, वर्गों, जातियों में बंटा हुआ था। सत्ता पर मुस्लिम शासकों का अधिकार था, बहुसंख्यक हिंदू वर्ग जात-पात और ऊंच-नीच की व्यवस्था में बुरी तरह जकड़ा हुआ था। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन में चार बड़ी यात्राएं भी की थीं। इन यात्राओं में उन्होंने हिंदू-तीर्थों की यात्राएं कीं, मुसलमानों के पीरों की दरगाहों पर भी गए, मक्का, मदीना तथा बगदाद का भ्रमण किया, सभी धर्मों और उनके नेताओं, पुरोहितों एवं काजियों से संवाद किया।

श्री गुरु नानक देव जी के जीवन भर के साथी और मित्र भाई मरदाना जी एक मिरासी मुसलमान थे। वे रबाब बहुत अच्छी बजाते थे। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्रवर्तित मार्ग मानवीय एकता, सद्भाव, समता और संकीर्णताविहीन मार्ग था। उन्होंने अपने समय की राजनीतिक स्थिति, विदेशी आक्रमण, आम लोगों पर होने वाले अत्याचारों और सामाजिक विद्रूपताओं पर तीखी टिप्पणियां कीं; उस समय के राजाओं, शासकों, सरकारी कर्मचारियों, न्यायाधीशों के चरित्र को उजागर किया। अपनी बाणी में एक स्थान पर उन्होंने कहा है- "आज के शासक व्याघ्र के समान हो गए हैं। उनके कर्मचारी कुत्तों के समान हो गए हैं। वे आम लोगों को अपने तेज नाखूनों से घायल करते रहते हैं और उनके रिसते हुए खून को चाट जाते हैं। जब परमात्मा के सामने उन्हें लाया जाएगा तो इनकी नाक काट ली जाएगी।"

राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ॥
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ ॥
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ॥
जिथै जीआं होसी सार ॥

**एच-१०८, शिवाजी पार्क, नई दिल्ली-११००२६, मो. : ९३१३९३२८८८*

नंकी वढी लाइतबार ॥ *(पन्ना १२८८)*

उस समय न्याय-व्यवस्था कितनी भ्रष्ट हो गई थी, श्री गुरु नानक देव जी ने इस विषय पर भी प्रकाश डाला है। काजी न्यायाधीश बनकर न्याय करने का दावा करता है। वह हाथ में न्याय की माला फेरते हुए ईश्वर का नाम लेता रहता है, किंतु व्यवहार में रिश्वत लेकर न्याय करते हुए अपने कर्त्तव्य को भूल जाता है। यदि कोई उसके ऐसे न्याय पर प्रश्न उठाता है तो वह न्याय संहिता की दुहाई देने लगता है :

काजी होइ कै बहै निआइ ॥
फेरे तसबी करे खुदाइ ॥
वढी लै कै हकु गवाए ॥
जे को पुछै ता पड़ि सुणाए ॥ *(पन्ना ९५१)*

रिश्वत लेकर झूठी गवाही देने वालों की भी कमी नहीं है। ऐसे लोग तो फांसी दिए जाने योग्य हैं :

लै कै वढी देनि उगाही दुरमति का गलि फाहा हे ॥ *(पन्ना १०३२)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसे अनेक संकेत हैं कि राजा कैसा होना चाहिए, बादशाह में क्या गुण होने चाहिए, उसका अपनी प्रजा के प्रति रवैया कैसा होना चाहिए, उसी व्यक्ति को शासक बनना चाहिए जो उसके योग्य हो :

तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई ॥
जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई ॥
(पन्ना १०८८)

गुरबाणी में शासक, शासन-तंत्र, न्याय-पद्धति, राजनीतिक भ्रष्टाचार, आर्थिक घोटालों जैसे सामाजिक सरोकारों पर तीखी टिप्पणियां हैं और इनसे उभरने के सूत्रों की गहरी चर्चा है। राजनीति में नैतिकता होना और राजनीतिज्ञों द्वारा साधारण जनता की सेवा करने के पक्ष पर बार-बार आग्रह किया गया है। सम्पूर्ण सिक्ख परंपरा सभी धर्मों का आदर करती है और आचरण की शुद्धता पर बल देती है। शासक कोई भी हो, उसका धर्म कोई भी हो, उसकी सार्थकता उसकी पारदर्शिता में है।

यह भी इतिहास की विडंबना ही है कि पांच सौ वर्ष पूर्व जिस शांति-पथ का प्रवर्तन हुआ था और जिसने असमानता, अन्याय और पाखंड के विरुद्ध सामाजिक-क्रांति का उद्घोष किया था, उसका तत्कालीन सरकार से टकराव उत्पन्न हो गया। श्री गुरु नानक देव जी से लगभग एक सौ वर्ष बाद पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी को तत्कालीन मुगल शासक जहांगीर ने बंदी बनाकर, अनेक यातनाएं देकर शहीद कर दिया। जहांगीर ने अपनी आत्म-कथा 'तुजक-ए-जहांगीरी' में श्री गुरु अरजन देव जी पर अनेक निराधार आरोप लगाते हुए यह भी लिखा है कि "असंख्य लोग उनके अनुयायी थे, जिनमें बहुत-से मुसलमान भी थे।" श्री गुरु अरजन देव जी के बाद गुरु के शिष्यों और मुगल शासकों में टकराव कई सदियों तक बना रहा। दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय से यह टकराव सशस्त्र होकर हो गया। यह दृष्टव्य है कि टकराव सदैव सिक्खों और शासकों के मध्य रहा। सिक्खों और मुसलमान जनता के बीच सद्भाव सदैव बना रहा। सिक्खों ने कभी धार्मिक विश्वासों और आस्थाओं को राजनीति पर हावी नहीं होने दिया।

अठारहवीं शती के अंतिम वर्षों से उन्नीसवीं शती के मध्य तक पंजाब, सीमाप्रांत और कशमीर पर सिक्खों की राजनीतिक सत्ता का वर्चस्व छा गया था। उस समय महाराजा रणजीत सिंघ की राजनीतिक प्रभुता की दुंदुभी गूंज रही थी। महाराजा रणजीत सिंघ ने कभी सर्वधर्म-समभाव और धर्म-निर्पेक्षता के आदर्श

(शेष पृष्ठ ४५ पर)

दशम पातशाह का अनन्य श्रद्धालु सिक्ख
भाई निगाहीआ सिंघ आलमगीर

*-सिमरजीत सिंघ**

पांच दरियाओं की धरती के शूरवीर बाशिंदे हमेशा ही हक-सच की लड़ाई लड़ने में अग्रिम कतार में रहे हैं। इस धरती पर पैदा हुए जांबाज योद्धे हमेशा जुल्म से टक्कर लेते तथा शहीदियां प्राप्त करते रहे हैं। आज दुनिया में बहुत कम ०.५ प्रतिशत से भी अल्प-संख्या वाली 'सिक्ख कौम' दुनिया में सबसे ज्यादा शहीदियां प्राप्त करने वाली कौम है। इस कौम ने हमेशा ही अपना नाता हक-सच की लड़ाई लड़ने वाले शूरवीर योद्धाओं से बनाए रखा है। जहां यह कौम अपने तथा मानवता के अधिकारों के लिए इतनी जागृत है वहीं इसमें एक ढिलाई भी है कि यह अपने इतिहास को अच्छे ढंग से संभाल नहीं सकी। आज हम सिक्ख कौम के हजारों ही शहीदों के जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त करने से वंचित रह गये हैं। सिक्ख इतिहास के जो मौलिक स्रोत हैं वे लगभग सब के सब गैर-सिक्खों द्वारा लिखे होने के कारण सिक्खी के बारे में सही जानकारी नहीं दे सके या उन्होंने उन योद्धाओं की कई बातों को अपने ढंग से व्याख्यात कर दिया। जो कथायें या इतिहास सिक्खों में सीना-ब-सीना चली आ रही बातों को सुनकर लिखा उसमें उन्होंने श्रद्धामयी भावुकता में करामाती पक्ष को बहुत बड़े स्तर पर जोड़ दिया, जिस कारण ऐसे शूरवीरों की मेहनत को मात्र एक करामात के तौर पर ही जाना जाने लगा। आज हमारे पास जो इतिहास मौजूद है उसमें से हजारों ही जांबाज योद्धाओं का इतिहास गायब है। जो इतिहास हमारे पास मौजूद भी है, वो भी समय की मार तले आकर दिन-प्रतिदिन गायब होता जा रहा है; हमारे स्रोत खत्म होते जा रहे हैं।

दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जब हक-सच की लड़ाई लड़ते हुए अनंदपुर साहिब का किला छोड़ा तो उनके साथ इस लड़ाई में अपने-अपने ढंग से सैकड़ों शूरवीरों ने साथ दिया, उसका मूल्य उनको अपना बलिदान देकर उतारना पड़ा। ऐसा ही एक शूरवीर गुरु-घर का श्रद्धालु था--भाई निगाहीआ सिंघ आलमगीर, जिसके बारे में ज्ञानी गिआन सिंघ ने 'तवारीख गुरू खालसा' में जिक्र किया है कि जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी चमकौर की गढ़ी से निकलकर माछीवाड़ा पहुंचे तो वहां भाई दया सिंघ, भाई धरम सिंघ, भाई गनी खां, भाई नबी खां तथा भाई मान सिंघ गुरु जी को एक पलंग पर बैठाकर 'उच्च के पीर' के रूप में लिये जा रहे थे। जब वे गांव आलमगीर के पास पहुंचे तो उनको रास्ते में निगाहीआ सिंघ मिला, जो अपने पुत्र के साथ घोड़े बेचने जा रहा था। रास्ते में गुरु जी के दर्शन करके उनको एक घोड़ा सवारी करने के लिए पेश कर दिया, जिसके कारण गुरु जी बहुत प्रसन्न हुए तथा पलंग छोड़कर घोड़े पर सवार हो गये। इस जगह पर आजकल आलीशान 'गुरुद्वारा मंजी साहिब' (आलमगीर) बना हुआ है जो कि महानगर लुधियाना शहर से लगभग १० किलोमीटर की

**संपादक, गुरमति प्रकाश/गुरमति ज्ञान।*

दूरी पर लुधियाना-मलेरकोटला सड़क पर स्थित है। इस गांव के बारे में कहा जाता है कि १७वीं शताब्दी के आरंभ में ही यह गांव बस चुका था। मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही रिवायत के अनुसार गांव बीजा के पास सराय लशकरी खान कोटां का उद्घाटन करने के लिए मुगल सम्राट औरंगजेब आया था। जब औरंगजेब उद्घाटन करने के लिए आया तो गांव धांदरा के चौधरी ने उसके आगे फरियाद की कि नवाब लोधी उसकी लड़की के साथ जबरदस्ती शादी करना चाहता है। यह सुनने के उपरांत औरंगजेब ने शादी के दिन नवाब लोधी का सिर काट दिया। इस कारण इस बस्ती का नाम औरंगजेब आलमगीरी के नाम पर आलमगीर पड़ गया। गुरुद्वारा साहिब को सिक्ख राज्य के समय ७० बीघा जमीन भी दी गई थी। इस गुरुद्वारा साहिब में प्रति वर्ष १४, १५, १६ पौष वाले दिन दशम गुरु जी के आगमन की याद में जोड़-मेला (वर्षगांठ) होता है।

भाई निगाहीआ सिंघ की पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में शोध करने पर पता चला कि जिला लुधियाना में एक गांव गुज्जरवाल है। उस गांव का निवासी तोता जट्ट (गरेवाल) था। उसके तीन पुत्र थे--सेमा, जोधा तथा उगर। सेमा अपनी जवानी के दिनों में १६०० ई के निकट गांव गुज्जरवाल छोड़कर आलमगीर आ गया और यहां जमीन खरीदकर आलमगीर का निवासी बन गया। आज आलमगीर गांव के अधिकतर निवासीयों को सेमे की औलाद ही माना जाता है। सेमे का पुत्र था बलाकी और बलाकी का पुत्र था लखमीर सिंघ; लखमीर सिंघ का पुत्र था निगाहीआ सिंघ, जो अपने पांच भाइयों में से सबसे बड़ा था। भाई निगाहीआ सिंघ के शेष चार भाई--सूरज मल, राम सिंघ, नूनी तथा मीठा थे। भाई निगाहीआ सिंघ के भी आगे तीन पुत्र थे--सरदूल सिंघ, बाघा सिंघ तथा भागा सिंघ।

भाई निगाहीआ सिंघ के जन्म के बारे में ख्याल किया जाता है कि लखमीर सिंघ का विवाह मूलोवाल के भाई पिआरा सिंघ की पुत्री के साथ हुआ था। इस तरह भाई निगाहीआ सिंघ का ननिहाल गांव मूलोवाल है तथा भाई पिआरा सिंघ उनके नाना का नाम था जो गुरु-घर का प्रेमी था। एक बार जब श्री गुरु तेग बहादर साहिब मालवा देश की यात्रा करने आये तो वे घनौली, रोपड़, नंदपुर कलौड़, दादू माजरा, उगाणा, नौलक्खा, टहिलपुर तथा लंग आदि गांवों में लोगों को उपदेश देते हुए गांव मूलोवाल आ गये। भाई माईआ गोंदा वहां का पैंच, गुरु जी के पास रसद लेकर आया। गुरु जी ने पीने के लिए पानी मांगा तो भाई माईए ने विनती की कि पास वाले कुएं का पानी खारा एवं कड़वा है, मीठे पानी वाला कुआं थोड़ा दूर है, वहां से पानी ले आते हैं, किंतु गुरु जी ने खारे पानी वाले कुएं का पानी मंगवाकर पीया। फिर सारा गांव उसी कुएं से ही पानी भरने लगा। गुरु जी ने गरीब परिवारों भाई माईए को सिरोपाउ दिया। अब उसकी संतान वहां रहती है। यहां पर आजकल गुरुद्वारा मंजी साहिब बना हुआ है, जो महाराजा करम सिंघ पटियाला वाले ने संवत् १८८२ में बनवाया था और जागीर भी इसके नाम पर लगाई थी। नवम् पातशाह २१ पौष, संवत् १७२० को गांव मूलोवाल आए थे। उस गांव का (हरीके गोत्र का जट्ट) भाई पिआरा सिंघ अपनी बेटी, जो लखमीर सिंघ आलमगीर की पत्नी थी, तथा अपनी पत्नी के साथ नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब के दर्शन करने के लिए आया तो उसकी बेटी ने गुरु जी से मांग की कि मेरा पहलौठा बेटा

गुरु जी की सेवा में अपना जीवन अर्पित करे। गुरु जी ने कहा कि इसी तरह होगा। यह बात ३, ४ जनवरी, १६६४ ई की है। इसी वर्ष के आखिरी महीनों में भाई निगाहीआ सिंघ का जन्म हुआ माना जाता है। इस तरह वे दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हम-उम्र ही थे।

चमकौर साहिब की जंग में दशम पातशाह के दोनों साहिबजादे तथा अन्य सिंघ शहीद हुए। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा प्रकाशित विवरण के अनुसार चमकौर साहिब की रण-भूमि में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के बड़े साहिबजादे--बाबा अजीत सिंघ जी तथा बाबा जुझार सिंघ जी के साथ पांच प्यारों में से भाई मोहकम सिंघ जी, भाई हिम्मत सिंघ जी तथा भाई साहिब सिंघ जी के अलावा निम्नलिखित सिंघ शामिल थे :

१. भाई जवाहर सिंघ, श्री अमृतसर
२. भाई रतन सिंघ, माणकपुर
३. भाई माणक सिंघ, माणोके दुआबा
४. भाई क्रिपाल सिंघ, करतारपुर 'रावी'
५. भाई दिआल सिंघ, रामदास
६. भाई गुरदास सिंघ, श्री अमृतसर
७. भाई ठाकुर सिंघ छारा
८. भाई परेम सिंघ, मनीमाजरा
९. भाई हरदास सिंघ, ग्वालियर
१०. भाई संगो सिंघ, माछीवाड़ा
११. भाई निहाल सिंघ, माछीवाड़ा
१२. भाई महिताब सिंघ, रूपनगर
१३. भाई गुलाब सिंघ, माछीवाड़ा
१४. भाई खड़क सिंघ, रूपनगर
१५. भाई टेक सिंघ, रूपनगर
१६. भाई तुलसा सिंघ, रूपनगर
१७. भाई सहिज सिंघ, रूपनगर
१८. भाई चढ़त सिंघ, रूपनगर
१९. भाई झंडा सिंघ, रूपनगर
२०. भाई सुजान सिंघ, रूपनगर
२१. भाई गंडा सिंघ, पेशावर
२२. भाई निशान सिंघ, पेशावर
२३. भाई बिशन सिंघ, पेशावर
२४. भाई गुरदित्त सिंघ, पेशावर
२५. भाई करम सिंघ, भरतपुर
२६. भाई सुरजीत सिंघ, भरतपुर
२७. भाई नरैण सिंघ, भरतपुर
२८. भाई जैमल सिंघ, भरतपुर
२९. भाई गंगा सिंघ, जवालामुखी
३०. भाई शेर सिंघ, आलमगीर
३१. भाई सरदूल सिंघ, आलमगीर
३२. भाई सुक्खा सिंघ, आलमगीर
३३. भाई पंजाब सिंघ, खंडू
३४. भाई दमोदर सिंघ, खंडू
३५. भाई भगवान सिंघ, खंडू
३६. भाई सरूप सिंघ, काबुल
३७. भाई जवाला सिंघ, काबुल
३८. भाई संत सिंघ, पोठोहार
३९. भाई आलम सिंघ, पोठोहार
४०. भाई संगत सिंघ
४१. भाई मदन सिंघ
४२. भाई कोठा सिंघ

इन सिंघों ने जालिमों की फौज का डटकर मुकाबला करते हुए शहीदी प्राप्त की। इनमें से भाई शेर सिंघ, भाई सरदूल सिंघ तथा भाई सुक्खा सिंघ शहीदी प्राप्त करने वाले गांव आलमगीर के निवासी थे। इनमें से भाई सरदूल सिंघ, भाई निगाहीआ सिंघ का बड़ा पुत्र था। इन शहीदों का अंतिम संस्कार इकट्ठा वहीं जंग के मैदान में कर दिया गया था, जहां आजकल 'गुरुद्वारा कतलगढ़ साहिब' बना हुआ है। आलमगीर के निवासियों ने अपने गांव के शहीदों की

'यादगारें' अपने गांव में भी बनाई हुई हैं।

जब दशम पातशाह १४ पौष, संवत् १७६१ मुताबिक २९ दिसंबर, १७०४ ई को आलमगीर पहुंचे तो उस समय भाई निगाहीआ सिंघ को पता था कि साहिबजादों के साथ उसका बड़ा पुत्र भी शहीद हो चुका है तथा मुगल फौज दशम पातशाह का पीछा कर रही है। उसने गुरु साहिब को घोड़ा पेश किया कि वे जल्द से जल्द दूर निकल जायें। गांव आलमगीर में एक धर्मशाला है। गांव वालों के अनुसार यह भाई निगाहीआ सिंघ का ही घर था, जिसको धर्मशाला के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। गांव वालों ने भाई निगाहीआ सिंघ के घर को संभालने की कोई कोशिश नहीं की।

जब भाई निगाहीआ सिंघ ने गुरु साहिब को घोड़ा भेंट कर दिया तो गुरु साहिब घोड़े पर सवार होकर चले गये। उसके बाद मुगल फौज गुरु जी का पीछा करती हुई गांव में आ गई तथा उसने भाई निगाहीआ सिंघ के घर को घेरा डाल लिया। वह उस घेरे में से निकलकर अपने ननिहाल गांव मूलोवाल पहुंच गया तथा मुगल सेना ने उसका सारा परिवार कत्ल कर दिया। जब गुरु साहिब को पता चला कि भाई निगाहीआ सिंघ का सारा परिवार कत्ल कर दिया गया है तो गुरु साहिब ने रात को ही साधारण लिबास में गांव मूलोवाल पहुंचकर भाई निगाहीआ सिंघ को ढाढ़स बंधाया। इस तरह १५ पौष, संवत् १७६१ को भाई निगाहीआ सिंघ तथा उसके नाना भाई पिआरा सिंघ की गांव मूलोवाल में गुरु साहिब के साथ आखिरी मुलाकात हुई। इस संबंध में एक हुकमनामा भी मिलता है, जो २७ अगस्त, १९५२ ई दिन बुधवार को गुरुद्वारा मंजी साहिब के नजदीक पश्चिम दिशा में सेवा करती संगत को मिला था। यह हुकमनामा खद्दर (खादी) के सफेद रुमाले में लपेटा हुआ था तथा मिट्टी के बर्तन में पड़ा था। बर्तन के मुंह पर काले पत्थर की कुछ राख मिली। यह हुकमनामा गुरुद्वारा श्री मंजी साहिब पातशाही नौवीं-दसवीं, गांव मूलोवाल, जिला संगरूर द्वारा छपाया हुआ मिलता है। हो सकता है कि प्रिंटर्ज से मात्राओं की या किसी अक्षर की गलती हो गई हो, परंतु उन्होंने अपने द्वारा असल की कापी ही बताई है। इसकी प्रमाणिकता संबंधी भी शोध करने की जरूरत है।

इस तरह अंदाजा लगाया जा सकता है कि जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी भाई निगाहीआ सिंघ को आखिरी बार गांव मूलोवाल में जाकर मिले उस समय भाई साहिब की आयु लगभग ४० वर्ष की होगी। इसके पश्चात भाई निगाहीआ सिंघ का क्या बना, कुछ पता नहीं चलता। यह एक शोध का विषय है। इस तरफ इतिहासकारों को ध्यान देना चाहिए।

खालसा पंथ अपनी विरासत को संभालने में काफी ढीला है। यही कारण है कि पंथ के लिए अपने सारे परिवार की कुर्बानी देने वाले भाई निगाहीआ सिंघ के शेष जीवन की विशेष जानकारी नहीं मिलती। जो कौम अपनी विरासत एवं इतिहास को नहीं संभालती, उसका क्या हाल होता है, यह बताने की जरूरत नहीं। आओ, हम अपनी विरासत को संभालते हुए, अपने शहीदों के जीवन के बारे में शोध करके उनकी जानकारी सारी दुनिया में पहुंचायें ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियां अपने इतिहास पर गर्व करके, अपना सर ऊंचा करके चल सकें तथा अपने पूर्वजों के जीवन से दिशा लेकर हमेशा हक-सच की आवाज पर डटी रहें!

संगीत-क्षेत्र में गुरमति संगीत का स्थान

-डॉ. प्रेम मच्छाल*

सिक्ख धर्म में गुरु साहिबान की बाणी को 'गुरबाणी', जहां गुरबाणी-संग्रह श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हो उसको 'गुरुद्वारा' और उनके उद्देश्यों और उपदेशों को 'गुरमति' (गुरु की मति) कहने के कारण भारतीय संगीत के जो सप्त स्वर सिक्ख धर्म की आस्था और विश्वास को उज्जवल (विकसित) करने में प्रयोग किए गए, उसी के परिवर्तित स्वरूप को 'गुरमति संगीत' का नाम दिया गया। समस्त गुरु साहिबान ने शुद्ध उच्चारण तथा रागों में प्रयुक्त स्वरों की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया है। यही सब बातें गुरु साहिबान की दूरदर्शिता की परिचायक हैं और यह भी सिद्ध करती हैं कि गुरु साहिबान संगीत एवं काव्य में पूर्ण दक्ष थे। जिस प्रकार अन्य धर्मों या संप्रदायों में परमात्मा के गुणगान या स्तुति हेतु संगीत का प्रयोग किया जाता था, उसी प्रकार श्री गुरु नानक देव जी ने भी जब अपने पंथ को प्रारंभ करने का विचार बनाया तो आपने भी भारतीय संगीत की महानता को ध्यान में रखकर अपने नवनिर्मित मार्ग को प्रशस्त करने हेतु पूर्व प्रचलित विधाओं और सांगीतिक तत्वों का सदुपयोग कर 'कीर्तन' का मार्ग प्रशस्त किया। आपके द्वारा रागाधारित बाणी का उच्चारण तथा उसे राग के स्वरों से सुसज्जित कर कीर्तन करने का उपदेश भी इस बात का साक्षी है कि इस प्रकार की बाणी का संगीतमयी उच्चारण सुनकर जहां प्रत्येक प्राणी-मात्र चिंतन-मनन के द्वारा आत्मा-परमात्मा में मिल जाते हैं वहीं मानव-मन *"अब मोहि जीवन पदवी पाई"* तथा *"राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे"* की महान अनूभूति का अनुभव करना भी प्रारंभ कर देता है।

सिक्ख धर्म में कीर्तन के लिए संगीत का आधारभूत ज्ञान होना अनिवार्य है। अस्तु उसके लिए गुरु-शिष्य परंपरा के अनुसार विधिवत राग-ताल-सम्पन्न कीर्तन-गायन की शैली की शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है। कीर्तन-शिक्षा का प्रबंध कुछ गुरुद्वारों तथा सिक्ख संस्थाओं में भी है, जैसे श्री गुरु रामदास संगीत विद्यालय, श्री अमृतसर, सेंट्रल यतीमखाना, श्री अमृतसर; शहीद सिक्ख मिशनरी कॉलेज, श्री अमृतसर; गुरमति संगीत विद्यालय, श्री अनंदपुर साहिब; खालसा प्रचारक राग विद्यालय; तरनतारन, मिशनरी कॉलेज, लुधियाना; गुरमति विद्यालय, गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब, नई दिल्ली; गुरमति संगीत विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला आदि। इसके अलावा कुछ प्राचीन 'टकसालों' में भी कीर्तन सिखाने का विशेष प्रबंध है। इन संस्थाओं में सीखने वालों को जीवन-निर्वाह की सभी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती हैं। कीर्तन सीखने के पश्चात् मनुष्य को 'रागी' रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। इन विद्यालयों का उद्देश्य तीन तरह के विषय तैयार करना है--प्रचारक, ग्रंथी और रागी। कीर्तन के लिए विशेष रूप से पाठ्यक्रम बनाया जाता है। कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की शैलियां भी व्यवहार में लाई जाती हैं, जैसे--ध्रूपद, धमार, ख्याल शैली पर आधारित कीर्तन।[१] कुछ शब्द परंपरागत एक ही शैली में बंधे चले आ रहे हैं,

*Asstt. Professor, Music & Dance Deptt., Kurukshetra University, Kurukshetra (HR.). M: 09729560001

जिनको 'शबद रीत' अथवा 'टकसाली रीत' कहा जाता है, उन्हें भी सिखाया जाता है। ये बंदिशें सीना-ब-सीना चली आ रही हैं। वर्तमान में गुरमति संगीत पर सुगम संगीत तथा गज़ल अंग की गायन-शैली का प्रभाव भी देखने को मिलता है जो कि उचित नहीं है।

सिक्ख धर्म के अनुयायियों ने विकलांग, नेत्रहीन तथा पितृ-मातृ-विहीन बच्चों के भविष्य को उज्जवल बनाने के लिए कई केंद्र ऐसे भी स्थापित किए हैं, जहां पर बच्चों को प्रथम कक्षा से लेकर एम. ए. तक की सामान्य शिक्षा, संगीत-शिक्षा तथा विभिन्न प्रकार की दस्तकारी का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। सेंट्रल खालसा यतीमखाना, श्री अमृतसर ने अपंग बच्चों के जीवन को संवारने में महान कार्य किए हैं। वहां पर प्रत्येक विद्यार्थी के लिए संगीत-शिक्षा अनिवार्य है। गायन, वादन की पृथक रूप से रुचि अनुसार शिक्षा दी जाती है। इस यतीमखाने से शिक्षा पाकर अनेक प्रसिद्ध रागी समाज की सेवा करते रहे हैं।[२] यह संस्था ७८ वर्षों से इस कार्य में सेवारत है।

'शबद रीत' के बारे में डॉ. पैंतल का मत है कि "प्रारंभ में सभी शबद उस समय की प्रचलित गायन-शैली के अनुसार स्वरबद्ध किए गए होंगे, परंतु समय के परिवर्तन के कारण रुचि तथा गायन की शैली में जो परिवर्तन हुए उसका प्रभाव गुरमति संगीत पर भी देखने को मिला, जो वर्तमान में भी जारी है। . . . परिस्थिति विशेष के अनुसार जब गुरबाणी का गायन किया जाता है, तो उस समय रागों के गायन समय के नियम की पालना न करते हुए परिस्थिति अनुसार शबदों का चयन कर गायन किया जाता है। उदाहरणार्थ--यदि किसी मनुष्य के परलोक गमन कर जाने पर करवाए गए पाठ के भोग के अवसर पर जब कीर्तन किया जाता है तो उस समय परिस्थिति विशेष के अनुसार ही शबदों का चयन किया जाता है न कि रागों के समय के नियानुसार। अनेक रागी-सज्जन उस समय के रागों के समयानुसार तथा परिस्थितियों को भी ध्यान रखते हुए शबदों का चयन कर कीर्तन करते हैं और अपनी कुशलता को प्रदर्शित करते हैं जो कि हर एक रागी के वश की बात नहीं और न ही सभी से यह उपेक्षा की जा सकती है। कुछ रागी-जन श्रेताओं की पृष्ठभूमि तथा रुचि को ध्यान में रखते हुए भी तथा अपनी क्षमताओं में रहकर भी कीर्तन करते हैं।"[३]

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसी भी बाणियां हैं जो लंबी होने के कारण अलग-अलग रागों में तथा अलग-अलग तालों में गाए जाने की सुविधा प्रदान करती हैं। यह शैली उसी प्रकार की है जिसे हम शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में रागमाल या रागमलिका के नाम से जानते हैं। कीर्तन-गायन में इन्हें 'गुलदस्ता' और 'पड़ताल' कहते हैं। कीर्तन-मंडली को 'रागी जत्था' कहते हैं। यह प्राय: तीन अथवा इससे अधिक व्यक्तियों का हो सकता है। प्राय: दो व्यक्ति शबद गायन करते हैं, एक तबला बजाता है और अन्य व्यक्ति अन्य वाद्यों का वादन करते हैं। गुरुद्वारों में प्रतिदिन के कीर्तन के अतिरिक्त शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी तथा धर्म-प्रचारार्थ स्थापित अन्य संस्थाएं समय-समय पर कीर्तन दरबारों का आयोजन करती हैं। इसके अतिरिक्त इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का योगदान भी सराहनीय है जो कि विभिन्न टी. वी. चैनल्ज के माध्यम से तथा सी. डी. और कैसिट के माध्यम से गुरमति संगीत के प्रचार-प्रसार में अपनी अहम भूमिका निभा रहा है। कंप्यूटर के इस आधुनिक युग में इंटरनेट के माध्यम से विदेशों के विभिन्न गुरुद्वारों में यह सुविधा उपलब्ध है कि वहां से गुरबाणी, कीर्तन, कथा तथा पाठ का सीधा प्रसारण दुनिया के किसी भी कोने में सुना

जा सकता है जो कि श्रोताओं के लिए एक वरदान सिद्ध हो रहा है। इसके अतिरिक्त गुरु साहिबान के प्रकाश-दिवस, शहीदी-दिवस तथा अन्य ऐतिहासिक त्योहारों पर उच्च दर्जे के कीर्तन दरबार आयोजित किए जाते हैं, जिसमें रागी जत्थों को अपनी प्रतिभा दिखाने का सुअवसर मिलता है। कीर्तन-प्रतियोगिताएं भी करवाई जाती हैं जिनमें प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पाने वालों को विशेष रूप से सिरोपा आदि प्रदान कर सम्मानित किया जाता है। 'रैण सवाइयों' का आयोजन भी गुरुद्वारों में किया जाता है जिसमें रात्रि भर के लिए विभिन्न रागी जत्थे अपने कीर्तन द्वारा साधसंगत को निहाल करते हैं।

कीर्तन दरबार के अतिरिक्त गुरमति संगीत में कीर्तन करने के लिए युवा वर्ग को तथा बच्चों को प्रेरित करने के लिए खालसा कॉलजों, खालसा स्कूलों एवं सिक्ख मिशनरी स्कूलों में भी अन्य विषयों के साथ-साथ संगीत की शिक्षा दी जाती है जिससे बच्चों को रागों पर आधारित कीर्तन करने में सहजता अनुभव होती है। इसके अतिरिक्त कई गुरुद्वारों में भी गुरमति विद्यालय खोले गए हैं। कुछ गुरुद्वारों में नगर की धार्मिक सोसायटियों द्वारा समय-समय पर विशेष कैंपों का आयोजन किया जाता है, जिसमें गुरमति संगीत, गुरबाणी के पाठ का उच्चारण तथा वीर रस से ओतप्रोत 'गतका' (युद्ध-कला) की भी शिक्षा दी जाती है।

भारत में लोक संगीत, सुगम संगीत, शास्त्रीय संगीत, गुरमति संगीत और धार्मिक संगीत की परंपराएं अपने-अपने दायरे में एक ही समय में प्रचार में आईं और विकसत हुईं। धार्मिक संगीत शास्त्रीय संगीत की तरह अपने मूल स्वरूप में न बंधकर समय के परिवर्तन तथा विद्वानों के प्रयोगात्मक दृष्टिकोण के कारण एवं बदलती लोक-रुचि के कारण परिवर्तित होता रहा। यह अपने कुदरती तथा परिवर्तित रूप दोनों ही प्रकार से जनसाधारण के प्रचार में रहा जब कि 'गुरमति संगीत' में केवल प्रभु-महिमा को ही शामिल किया गया है :

विसरु नाही दातार आपणा नामु देहु ॥
गुण गावा दिनु राति नानक चाउ एहु ॥
(पन्ना ७६२)

गुरमति संगीत की शास्त्रीय संगीत से भिन्नता बिलकुल स्पष्ट है। शबद-कीर्तन में प्रयोग की जाने वाली तालें गूढ़ शास्त्रीय ढंग की होती हैं, परंतु शास्त्रीय संगीत में गायकी प्रधान होती है जिसमें आलाप मुख्य होता है। कई बार आलाप की ही प्रधानता होती है और बोल सुनाई ही नहीं देते। गुरमति संगीत राग या आलाप-प्रधान संगीत नहीं है, इसमें राग और ताल को शबद के साथ एक सुर तो रखा ही जाता है परंतु इसकी गूंज में शबद को अस्पष्ट व गुम नहीं होने दिया जाता। सुरति में कीर्तन द्वारा एकाग्रता को प्राप्त कर शबद-ध्यान से एकसुर होना होता है। गुरमति संगीत मनोरंजन का साधन नहीं, अपितु यह आत्मा के आध्यात्मिक विकास का माध्यम है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने गुरमति संगीत को नवजीवन और नवस्फूर्ति प्रदान की है। गुरमति संगीत रागों पर आधारित होने के कारण भारतीय समाज के चेतन वर्ग में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस तरह गुरमति संगीत की परंपरा भारतीय संगीत में एक जीती-जागती परंपरा के रूप में विकसित हुई। सिक्ख गुरु साहिबान ने संगीत के आध्यात्मिक मूल्य को समझाते हुए इसे कीर्तन में संजोया और गुरुद्वारों में राग व तालबद्ध कीर्तन की प्रथा को अनिवार्य करके गुरमति संगीत का अस्तित्व बनाए रखा। इस प्रकार गुरमति संगीत राग-गायन, शिक्षा एवं अभ्यास का विषय बना।

गुरु के द्वारा दिखाए गए मार्ग का अनुसरण करना शिष्यों का परम कर्त्तव्य है, अतएव कीर्तन

के साथ संगीत को भी मान्यता प्रदान की गई। श्री गुरु नानक देव जी के शिष्य होने के कारण ही उनके अनुयायियों (सिक्खों) में रागबद्ध कीर्तन का प्रचार हुआ। इस तरह धर्म और कला का सुमेल श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रूप में हुआ और दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु-पदवी देकर मानव-मात्र को एक अद्वितीय सौगात प्रदान की गई।

संदर्भ-सूची

१. भेंटवार्ता- डॉ. गुरनाम सिंघ, अध्यक्ष, गुरमति संगीत विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला, दिनांक २१-७-२००६

२. 'खालसा एडवोकेट' श्री अमृतसर, जनवरी-फरवरी, १९८२, पृष्ठ २

३. Dr. A. S. Paintal, The Nature and Place of Music, page. 152

कविता

गाथा चमकौर की गढ़ी की

अनंदपुर के किले से बाहर,
मुगलों के झूठे आश्वासन पर,
जब गुरु जी निकले किला छोड़कर,
शत्रु ने पीछे से आक्रमण कर,
सिक्ख सैनिक बहु थे मार गिराये।
केवल कुछ ही थे बच कर आये।
चालीस सिंघों साथ गुरु जी चमकौर गये।
औ कच्ची एक हवेली में सब ठहर गये।
शत्रु भी पीछे-पीछे उनके पहुंच गये।
घेरा डाल हवेली के बाहर बैठ गये।
केवल चालीस सिंघ हैं, उन्हें पता था।
गुरु जी को हर हाल में, पकड़ना था।
सवेरे से सांझ तक हुई, थी बड़ी लड़ाई।
सिंघों ने वीरता जिसमें, थी बहुत दिखाई।
बाहर आ सिंघों ने, शत्रु को ललकारा।
शहीदी पाने तक बहुत को, उन्होंने मारा।
बाबा अजीत सिंघ पास पिता के आया।
प्रणाम किया पिता को औ शीश झुकाया।
पिता जी, आज्ञा दें, शत्रु से जा टकराऊं।
मैं भी सिंघ हूं आपका, जौहर दिखलाऊं।
आशीष दी पिता श्री ने और कहा, जाओ!
अपनी तेग के जोर से, शत्रु को मार गिराओ।
विद्युत की तेजी से, वो शत्रुओं पर झपटा।
सैंकड़ों शत्रुओं से वो, रहा अकेला लड़ता।
शत्रु मार अनेक था, शहीद वो हो गया।
शूरवीरों में अमर नाम, उसका हो गया।
फिर चौदह वर्ष का 'जुझार', जूझने गया।
भाई की भांति शहीद, वह भी हो गया।
दो पुत्र उनके सामने, शहीद थे हुए।
फिर भी गुरु जी के, हौसले बुलंद रहे।
सायं तक सिंघ केवल, पांच ही थे बचे।
क्या करें, वे पांच अब, सोच थे रहे।
वे गुरु जी के सम्मुख, शीश झुकाये आये।
"है यह विनय हमारी, आप यहां से जायें!"
रण छोड़कर जाना, गुरु जी कैसे मानते?
इस भयानक घड़ी में, पांचों को कैसे छोड़ते?
पांचों ने मिलकर, फिर विनय दुहराई।
"हे वीर शिरोमणि, कृप्या सुनें दुहाई!
पांच सिंघों के बीच, आप जी सदा होंगे।
और सोच-विचार कर, जो निर्णय वे देंगे।
गुरमता मान्य वो, सब सिक्खों को होगा।
कहा था आप ने, याद आपको होगा।"
तर्क सुन कर यह गुरु जी, निरुतर हो गये।
और जाने को वहां से, सहमत हो गये।
संगत सिंघ के सिर पर, सजायी कलगी अपनी।
और अंधेरे में राह, जंगल की थी पकड़ी।
पंथ को अभी गुरु जी की, जरूरत बड़ी थी।
सामने पंथ के अभी दुखों की, सूची बड़ी थी।

-प्रो. महेंद्र जोशी, ३०-ए, गोपाल नगर, श्री अमृतसर-१४३००१

गुरमति में दान और दसवंध का महत्व

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

भाई कान्ह सिंघ नाभा के मुताबिक दान का अर्थ है--देने का कर्म, देने योग्य धन। वह वस्तु जो दान में दी गई हो तथा महसूल, कर आदि अर्थों में भी 'दान' शब्द का उपयोग हुआ मिलता है। गुरबाणी का कथन है :

--हउमै डंनु सहै राजा मंगै दान ॥ (पन्ना ४१६)
--पाप की जंञ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो ॥ (पन्ना ७२२)

गुरबाणी में 'दान' शब्द सामान्यत: सेवा और पुण्य-कर्म के अर्थों में आया है। गुरबाणी का पवित्र फरमान है :

महा दानि सतिगुर गिआनि मनि चाउ न हुटै ॥ (पन्ना १४०७)

भावार्थ यह है कि गुरु के ज्ञान वाले बड़े दानी हैं। उनके मन में सदैव ही उत्साह, चाव होता है। गुरबाणी तो यह भी फरमान करती है कि ज्ञान के बिना पूजा, उपासना, दान-पुण्य आदि करने भी सफल नहीं हो सकते :

गिआन हीणं अगिआन पूजा ॥ (पन्ना १४१२)

गुरमति-ज्ञान की प्राप्ति होने पर हमें समझ में आता है कि हमें परमात्मा की ओर से दिए गए दान के अधिकारी बनना है। दानी बनकर उस सच्चे, सबसे बड़े दातार के रकीब नहीं कहलवाना है। देने वाला दाता तो एक ही है। भक्त कबीर जी का कथन है :

उरवारि पारि सभ एको दानी ॥ (पन्ना ३३७)

दान करने वाले को दाता कहा गया है, जो गुरमति विचारधारा के अनुसार :

--दाता करता आपि तूं
तुसि देवहि करहि पसाउ ॥ (पन्ना ४६३)
--नानक दाता एकु है दूजा अवरु ना कोई ॥ (पन्ना ६५)

उस एक दातार से हम दात-दान की मांग करते हैं। मांगने वाला भिखारी या याचक है :

तू प्रभ दाता दानि मति पूरा हम थारे भेखारी जीउ ॥ (पन्ना ५९७)

हमें कुछ भी दान करके दातार होने का भ्रम व हउमै नहीं पालनी चाहिए और न ही दान प्राप्त करने वाले को हीन भावना का शिकार बनने देना चाहिए। दातार-दाता तो एक ही है, वह सबको देने वाला है। हमें याद रखना चाहिए :

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ (पन्ना २)

हमें सेवा और दान करते समय अहंकार से दूर रहना चाहिए। हम तन, मन, धन की सेवा करने के साथ-साथ ज्ञान बांटने की सेवा करके स्वयं को खुश रख सकते हैं, सच्ची शांति प्राप्त कर सकते हैं। गुरु के सिक्ख तो सुबह-शाम अरदास करते समय हउमै, अहंकार को मिटाकर नम्रतापूर्वक गुरु के आगे याचना करते हुए कहते हैं : *"सिक्खों को सिक्खी दान, केश दान, रहित दान, विवेक दान, विश्वास दान, भरोसा दान, दानों के सिर दान, नाम दान . . . बखशना।"*

सब दानों से बड़ा दान तो प्रभु के नाम

**बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, मो. ९८७२२-५४९९०*

का दान है। जिसे यह प्राप्त हो जाए उसे और क्या चाहिए? गुरबाणी में बार-बार हरि के नाम का दान वाहिगुरु से भिखारी बनकर मांगने के लिए कहा गया है। बेशक कोई व्यक्ति तीर्थों पर जाकर करोड़ों बार स्नान करे, डुबकियां लगाए और लाखों, अरबों, खरबों रुपए धन-दौलत के रूप में दान करे, किंतु यह सब कुछ भी उस जिज्ञासु के बराबर नहीं पहुंच सकता जिसके हृदय में वाहिगुरु के नाम का निवास है। गुरबाणी हमारा नेतृत्व यूं करती है:

कोटि मजन कीनो इसनान ॥
लाख अरब खरब दीनो दानु ॥
जा मनि वसिओ हरि को नामु ॥ (पन्ना २०२)

'नाम दान' सर्वश्रेष्ठ दान है। जो व्यक्ति प्रभु के प्रेम के रंग में रंगा हुआ, प्रभु के नाम का ज्ञानी होगा, वही दूसरों को ज्ञान का दान दे सकता है, दूसरों को प्रभु के नाम के साथ जोड़ सकता है। अज्ञानी व्यक्ति किसी को ज्ञान का दान कैसे दे सकता है? हां! ज्ञानी मनुष्य भी केवल दिखावे के लिए ज्ञानी नहीं होना चाहिए। उसे हर समय सचेत, जागरूक, चिंतनशील होने के साथ-साथ 'जागृत अवस्था', 'सहज अवस्था' में रहना चाहिए। उसे भले-बुरे, उचित-अनुचित की पहचान होनी चाहिए। अज्ञानी मनुष्य अन्य लोगों के पीछे लगकर अपनी दौलत, पूंजी व समय की बर्बादी करता है :

गिआनी होइ सु चेतंनु होइ अगिआनी अंधु कमाइ ॥ (पन्ना ५५६)

ज्ञान, विवेक की प्राप्ति हेतु वाहिगुरु के आगे अरदास की जाती है :

हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥ (पन्ना ६४१)

सिक्ख धर्म में जहां दान-पुण्य एवं अच्छे कार्यों का अति महत्व है, वहीं 'दसवंध' का भी बड़ा महत्व है। हमें नेक कमाई, धन-दौलत का ही नहीं बल्कि समय का दसवंध भी निकालना (देना) चाहिए। इस दसवंध के अंतर्गत बंदगी, नाम-सिमरन, हाथों से सेवा-कर्म, गुरबाणी का पाठ व विचार, धार्मिक-मूल्यों के बारे में विचार व अमल शामिल हैं। गुरमति में दान का भावार्थ सेवा है, जो सिक्ख ने अपनी किरत-कमाई में से जरूरतमंदों की मदद करके करनी होती है। गुरमति विचारधारा में *"गरीब का मुंह गुरु की गोलक है।"*

दसवंध की संस्था का पहला (मूल) रूप श्री गुरु रामदास जी के समय दृष्टिगोचर होता है। उस समय मसंद लोग दसवंध की रकम गुरु-घर में संगत-कार्य हेतु एकत्र करके भेंट किया करते थे। गुरु-घर की ओर से नियुक्त मसंद दसवंध के रूप में एकत्र की गई 'कार-भेटा' किसी विशेष पर्व पर गुरु-घर में आकर भेंट किया करते थे। दसवंध के निश्चित विधान के अलावा संगत अपनी सामर्थ्य के अनुसार गुरु-घर में धन, सोना, चांदी, जेवर, घोड़े तथा हथियार भेंट (अर्पित) कर गुरु-कृपा की पात्र बनती :

--दसवंध गुरु नहि देवई झूठ बोल जो खाइ। कहे गोबिंद सिंघ लाल जी तिस का कछू ना बिसाहि। (रहितनामा भाई नंद लाल जी)
--देह दसवंध गुर हित सदा।
दारदि सदन होहि नहि कदा।
(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

अपनी किरत-कमाई की बचत का दसवां भाग परोपकारी एवं सेवा-कार्यों हेतु खर्च करने को ही 'दसवंध' कहा गया है। श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ में अन्यत्र जिक्र है : *"जो अपनी कछु करहु कमाई। गुरु हित दिहु दसवंध बनाई।"*

एक सच्चे सिक्ख को यत्नशील होना

चाहिए कि गरीबों, बेसहारों, जरूरतमंदों के लिए भोजन, वस्त्रों, दवाओं, आदि का प्रबंध करने में अपना योगदान दे, गरीब-कन्याओं की शादी में सहयोग दे। गरीब बच्चों की पढ़ाई की फीस, कापियों, किताबों, बस्तों, वर्दियों के रूप में मदद करनी अति परोपकारी एवं कल्याणकारी कार्य है। गुरमति में लोक-कल्याणकारी कार्यों में योगदान, जरूरतमंदों की मदद तथा गुरुद्वारा साहिब में सेवा, संगत-पंगत की सेवा, पिंगलवाड़ा व यतीमखाने जैसी संस्थाओं में सामर्थ्य अनुसार योगदान देना ही महादान है। आंखें दान करने को, खून-दान को, अंग-दान को भी महा-दान कहा जाता है। भाई घनईया जी, भक्त पूरण सिंघ जी को कौन भूल सकता है? किसी किस्म का भी योगदान देते समय, दान करते समय हमें अहं-भाव से दूर रहना चाहिए। सच्ची सेवा करने पर 'सेवक' की उपाधि एवं आत्म-गौरव की प्राप्ति होती है।

दानशील, कर्मशील, विवेकशील, दयाशील होना और गरीब की, जीवों की रक्षा करना एक सच्चे सिक्ख की पहचान है, उच्च चरित्र का परिचय है, ऊंचे आदर्श व जीवन-उद्देश्य की कसौटी है।

कविताएं

खोना न इनको, खो जाओ इनमें

पेड़ मत काटो!
तालाब मत पाटो!
हवा में जहर मत घोलो!
नदी में नाले मत खोलो!
मिट्टी को ज्यादा मत निचोड़ो!
प्रकृति का संतुलन मत तोड़ो!
उसके अनमोल उपहारों को लूटो मत!
जरूरत भर खाओ, ठूंसो मत!
पक्षियों को चहकने दो!
वन-लताएं महकने दो!
झरनों का संगीत बहने दो!
सघन-कुंज की छांव रहने दो!
कोयल का कूजन, मेघों का गर्जन।
बरखा की रिमझिम, मोरों का नर्तन।
माटी की खुशबू, शीतल हवाएं।
कुदरत का आंचल, काली घटाएं।
अनमोल है यह प्रातः बयार।
इनसे बजाओ जीवन-सितार!
खोना न इनको, खो जाओ इनमें!
बस जाएगा आनंद-मंगल मन में!

वीरों की शब्दावली

देश-धर्म पे मिटने का जो जज्बा,
उसे जवानी कहते हैं।
इस जज्बे में मिटे स्वार्थ,
उसको कुर्बानी कहते हैं।
शत्रु कांपे जिसे देख,
उसको सेनानी कहते हैं।
बलि चढ़ता कर्त्तव्य हेतु,
उसको बलिदानी कहते हैं।
याद में रोयें गैरों के दिल,
उसे निशानी कहते हैं।
सुनने वाले तनें गर्व से,
उसे कहानी कहते हैं।
कट जाये पर झुके नहीं,
उसे स्वाभिमानी कहते हैं।

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली (उ. प्र.)-२४३००३, मो : ९४११६०७६७२

गुर सिखी बारीक है . . . १०

*–डॉ सत्येंद्रपाल सिंघ**

प्रेम मानव का सबसे प्रमुख और आकर्षक भाव है। सिक्ख गुरु साहिबान ने इस भाव की पवित्रता को मान्यता देते हुए इससे परमात्मा की उपासना को जोड़कर प्रेम को सशक्त और सार्थक बना दिया। प्रेम को सर्वोच्च भाव का स्थान दिया गया है और उसकी तुलना में शेष सब कुछ मूल्यहीन बताया गया है। प्रेम-भाव का इतना महिमा-मंडन मानव सभ्यता के इतिहास में पहली बार किया गया। भाई गुरदास जी ने प्रेम रस को अमूल्य बताया :

चारि पदारथ रिधि सिधि निधि लख करोड़ी।
लख पारस लख पारिजात लख लखमी जोड़ी।
लख चिंतामणि कामधेणु चतुरंग चमोड़ी।
माणक मोती हीरिआ निरमोल मरोड़ी।
लख कविलास सुमेरु लख लख राज बहोड़ी।
गुरमुखि सुख फलु पिरम रसु मुलु अमुलु सु थोड़ी ॥ *(वार १३:९)*

भाई गुरदास जी ने उपरोक्त वार में कहा कि मनुष्य सामान्यत: जिन चार पदार्थों--धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अलावा रिद्धियों, सिद्धियों, नवनिधियों की कामना करता है वे अकल्पनीय रूप से लाखों-करोड़ों गुना प्राप्त हो जायें, एक नहीं लाखों पारस पत्थर और पारिजात वृक्ष प्राप्त हो जायें, बेशुमार धन मिल जाये, रत्न, जवाहिरात पास आ जायें, लाखों कैलाश पर्वत और राज्य हासिल हो जायें उनसे भी वह सुख नहीं प्राप्त हो सकता जो एक गुरमुख के मन में उत्पन्न हुए प्रेम रस से प्राप्त होता है। शेष सारी वस्तुओं का मोल लगाया जा सकता है किंतु मन में उपजा प्रेम का भाव अनमोल है।

मन में प्रेम का होना ही सार्थक नहीं है। यह प्रेम कैसा है? किसी के मन में सांसारिक वस्तुओं के प्रति प्रेम हो सकता है, किंतु उस प्रेम को अमूल्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सांसारिक वस्तुएं, धन-सम्पत्ति सब चलायमान है, स्थिर नहीं है। उनके प्रति प्रेम इसी लिए अमूल्य नहीं है। एक गुरमुख जिस प्रेम को मन में धारण करता है वह ऐसा प्रेम नहीं है। गुरमुख का प्रेम चैतन्य और सहज होता है :

मनमुखि सूता माइआ मोहि पिआरि ॥
गुरमुखि जागे गुण गिआन बीचारि ॥
से जन जागे जिन नाम पिआरि ॥
सहजे जागै सवै न कोइ ॥
पूरे गुर ते बूझै जनु कोइ ॥ *(पन्ना १६०)*

जो मनुष्य की चेतना को निष्क्रिय कर दे वह प्रेम नहीं है। जिसमें किसी तरह की असहजता उपजती हो वह प्रेम नहीं है। जो चेतना को जागृत करता है और जीवन में सहजता को बनाये रखने में सहायक होता है वही अमूल्य प्रेम है। जिसके मन में ऐसा प्रेम जन्म लेकर अपना स्थान बनाता है वही गुरमुख है। जब एक श्रद्धालु या सिक्ख गुरसिक्ख-गुरमुख बनता है तो प्रेम का अमूल्य रस सतिगुरु स्वयं उसके मन में भरपूर कर देता है :

माता प्रीति करे पुतु खाइ ॥
मीने प्रीति भई जलि नाइ ॥
सतिगुर प्रीति गुरसिख मुखि पाइ ॥ *(पन्ना १६४)*

गुरमुख के मन की प्रीति इसलिये अनमोल

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९६०५३३*

हो जाती है क्योंकि परमात्मा इसे गुरमुख के मन में इस तरह बसाता है जैसे एक ममतामयी मां अपने पुत्र के मुख में प्यार से व्यंजन का कौर डालती है, जैसे अथाह जलराशि तैरती हुई मछली को अपने प्यार में बांध कर जीवित रखती है। गुरसिक्ख अपने सतिगुरु की ओर उन्मुख होता है और सतिगुरु उसमें परमात्मा के प्रति प्रेम के रस का संचार कर देता है। गुरमुख इस प्रेम रस द्वारा परमात्मा से जुड़ जाता है। यह प्रेम रस एक गुरमुख से कुछ त्याग करवाता है तथा बहुत कुछ देता है :

सुनहु लोका मै प्रेम रसु पाइआ ॥
दुरजन मारे वैरी संघारे सतिगुरि मो कउ हरि नामु दिवाइआ ॥ (पन्ना ३७०)

उपरोक्त वचन के अनुसार एक गुरमुख बुरी संगत को छोड़कर साधसंगत की शरण में जाता है और अपने विकारों पर नियंत्रण करता है। ऐसा करने पर सतिगुरु कृपा करके उसे परमात्मा की राह बताते हैं जिसके लिये प्रेम का रस उसके हृदय में उत्पन्न करते हैं, बशर्ते, उसे साधसंगत में बैठने के योग्य बनना पड़ता है :

प्रथमे तिआगी हउमै प्रीति ॥
दुतीआ तिआगी लोगा रीति ॥
त्रै गुण तिआगि दुरजन मीत समाने ॥
तुरीआ गुणु मिलि साध पछाने ॥ (पन्ना ३७०)

गुरसिक्ख पहले अपने अहम् का त्याग करता है, फिर सामाजिक आडंबरों, दिखावों से स्वयं को अलग कर लेता है। वह समदृष्टि को धारण करता है और सभी के साथ बिना किसी वैर-विरोध, भेदभाव के सम्मानजनक व्यवहार करने लगता है। एक गुरसिक्ख उन गुणों को धारण करता है जो सतिगुरु उसे बताते हैं। इन गुणों के बिना न तो मन में प्रेम-भाव उपज सकता है, न ही परमात्मा से संबंध स्थापित हो सकता है। स्पष्ट है कि मात्र कहने से ही प्रेम नहीं किया जा सकता। प्रेम को धारण करने के लिये पूरी तैयारी करनी होती है और स्वयं को उसके योग्य बनाना पड़ता है। सिक्ख धर्म-दर्शन ने पहली बार प्रेम की इतनी विस्तृत और व्यवहारिक व्याख्या की तथा प्रेम की सर्वोच्चता स्थापित करने से पूर्व उसके कारणों पर भरपूर प्रकाश डाला। सतिगुरु ने गुरमुख को बताया कि प्रेम का संबंध मन से है, अन्य किसी वस्तु या स्थिति से नहीं। एक गुरमुख अपने मन को सतिगुरु के सामने अर्पित करके प्रेम पालता है:

नाचु रे मन गुर कै आगै ॥
गुर कै भाणै नाचहि ता सुखु पावहि
अंते जम भउ भागै ॥रहाउ॥
आपि नचाए सो भगतु कहीऐ
आपणा पिआरु आपि लाए ॥ (पन्ना ५०६)

एक गुरमुख अपने आप को जब पूरी तरह से सतिगुरु के समक्ष समर्पित कर देता है तो सतिगुरु की कृपा उसके मन में प्रेम का संचार कर देती है। यह प्रेम इसलिये महान है क्योंकि गुरमुख इसे अपने मन के विकार, अहं आदि त्याग कर समर्पित-भाव से सतिगुरु से प्राप्त करता है। ऐसे प्रेम रस की एक बूंद भी अमूल्य है। इसकी तो महिमा ही अनंत है :

आदि अंति परजंत नाहि परमादि वडाई।
हाथ न पाइ अथाह दी असगाह समाई।
पिरम पिआले बूंद इक किनि कीमति पाई।
अगमहु अगम अगाधि बोध गुर अलखु लखाई ॥
(भाई गुरदास जी, वार १३:१२)

एक गुरमुख वह है जो प्रेम की शक्ति को जानता है। वह जानता है कि प्रेम की ऊर्जा अथाह है और इसका बोध उसे सतिगुरु ही कराते हैं। तभी तो वह अपना सब कुछ त्यागकर इसका वरण करने को तैयार हो जाता है। गुरमुख वो है जो इस बात को जानता है कि कितने त्याग के बाद प्राप्त होने वाला प्रेम

का भाव जो सतिगुरु ही दे सकता है, कितना अमूल्य है। मानव-स्वभाव है कि जब तक हम किसी चीज का मोल नहीं जानते, उसे गंभीरता से नहीं लेते और तब तक उस चीज का पूरा लाभ नहीं उठा पाते, भले ही वह कितनी भी अमूल्य हो। एक गुरमुख प्रेम के रस का मोल जानता है, इसलिये उस प्रेम रस की एक बूंद भी उसे बेशकीमती लगती है। एक गुरमुख अपनी सारी बहुमूल्य चीजें अर्पित करके उस प्रेम रस को पाने में विश्वास रखता है :

हउ मनु अरपी सभु तनु अरपी अरपी सभि देसा ॥
हउ सिरु अरपी तिसु मीत पिआरे जो प्रभ देइ सदेसा ॥
अरपिआ त सीसु सुथानि गुर पहि संगि प्रभू दिखाइआ ॥
खिन माहि सगला दूखु मिटिआ मनहु चिंदिआ पाइआ ॥
दिनु रैणि रलीआ करै कामणि मिटे सगल अंदेसा ॥
बिनवंति नानकु कंतु मिलिआ लोड़ते हम जैसा ॥
(पन्ना २४७)

जैसा सुख देने वाला प्रेम रस हम चाहते हैं वह पल भर में ही सारे दुखों को मिटा देता है। इस सुख को पाने के लिये गुरमुख अपना शीश तक अर्पित कर देता है। उपरोक्त वचन सारी शंकाओं का निवारण करते हुए स्पष्ट करता है कि अपना तन-मन-धन योग्य स्थान पर ही अर्पित करना चाहिये और यह योग्य स्थान है सतिगुरु के चरण और साधसंगत।

एक गुरमुख मन में प्यार को धारण करके स्वयं को परमात्मा से जोड़ता है। परमात्मा सुंदर स्वरूप है, मन को मोहने वाला है और उसके साथ ही प्रेम का संबंध स्थापित किया जा सकता है :

कहा भयो जो दोऊ लोचन मूंद कै बैठि रहिओ बक धिआन लगाइओ ॥
न्हात फिरिओ लीए सात समुद्रनि लोक गयो परलोक गवाइओ ॥
बास कीओ बिखिआन सो बैठ कै ऐसे ही ऐसे सु बैस बिताइओ ॥
साचु कहों सुन लेहु सभै जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभु पाइओ ॥९॥ (त्वप्रसादि सवैये)

उपरोक्त वचन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हैं जिसमें वे समझाते हैं कि केवल आंखें बंद करके बगुले की तरह ध्यान लगाने से, जगह-जगह तीर्थों में स्नान करके, घर-परिवार-समाज को छोड़कर वन में जा बैठने से कुछ हासिल नहीं होता। सच यह है कि परमात्मा को प्रेम-भाव से ही पाया जा सकता है। प्रेम का माध्यम परमात्मा को पाने के लिये किये जा रहे सारे प्रयासों, कर्मकांडों से श्रेष्ठ है और प्रेम ही एकमात्र मार्ग है परमात्मा को पाने का। यदि कोई परमात्मा को पाने के लिये प्रेम का मार्ग त्यागकर अन्य कर्म करता है तो वह परमात्मा को प्राप्त नहीं कर पायेगा। गुरु-घर और गुरु-संगत के अतिरिक्त लोग अन्य स्थानों पर भी चले जाते हैं, भांति-भांति के टोटकों में विश्वास करने लगते हैं, विभिन्न प्रकार की अंगूठियां-धागे पहनने के नाना प्रकार के भ्रम पाल लेते हैं। एक गुरमुख यह जानता है कि इन सबसे कोई भला नहीं होने वाला। यदि मन में प्रेम का रस नहीं है, विकारों का त्याग नहीं है, तन-मन-धन का समर्पण नहीं है, तो उद्धार संभव नहीं है। एक प्रेम ही है जो डूबते हुए को बचा सकता है और बचाकर परमात्मा के प्रेम में डुबो सकता है :

तरि डुबै डुबा तरै पी पिरम पिआला।
जिणि हारै हारै जिणै एहु गुरमुखि चाला।
मारगु खंडे धार है भवजलु भरनाला।
वालहु निका आखीऐ गुर पंथु निराला।

हउमै बजरु भार है दुरमति दुराला।
गुरमति आपु गवाइ कै सिखु जाइ सुखाला ॥
(भाई गुरदास जी, वार १३:१७)

भाई गुरदास जी ने बड़े ही सटीक ढंग से प्रेम के मार्ग की व्याख्या की है। वे कहते हैं कि प्रेम का पथ खड़ग की धार से भी अधिक तीखा है, जिससे विचलित होना भवसागर में डूब जाने के समान है। यह मार्ग केश के बाल से भी बारीक है और सतिगुरु द्वारा दिखाया गया एक निराला मार्ग है। जो इस मार्ग पर नहीं चलता, जीवन के अवसर को खो देता है। एक गुरमुख अपने आप को सतिगुरु के चरणों में समर्पित कर भार-मुक्त हो जाता है और प्रेम रस को धारण करके परमात्मा के इस निराले मार्ग पर सहजता से चलते हुए सुख को प्राप्त करता है।

सतिगुरु कृपा करके गुरमुख को यह सुमति देते हैं कि भाव रहित आचरण धर्म नहीं है। पूर्ण गुरसिक्खी वेश धारण कर लेने से, नित्यप्रति गुरु-घर में शीश निवाने से, साधसंगत करने से और नित्तनेम मात्र से ही उद्धार संभव नहीं है यदि मन से विकारों तथा अहम, दुर्बुद्धि का त्याग, सतिगुरु के समक्ष सम्पूर्ण समर्पण और मन में प्रेम का रस नहीं है। इस स्थिति की तुलना गुरु नानक साहिब निम्न वचन में उस मेहमान से करते हैं जो सूने घर का मेहमान है। वह सूने घर में जैसा आता है, किसी के घर में न होने के कारण बिना कोई सत्कार प्राप्त किये वैसे का वैसा ही लौट जाता है। गुरु साहिब कहते हैं कि जिसे प्रेम रस नहीं मिला वह पति (परमात्मा) से मिलन का सुख क्या जानेगा?

जिनी न पाइओ प्रेम रसु कंत न पाइओ साउ ॥
सुंञे घर का पाहुणा जिउ आइआ तिउ जाउ ॥
(पन्ना ७९०)

सिक्ख चिंतन : सर्वधर्म-समभाव की दृष्टि *(पृष्ठ ३० का शेष)*

को खंडित नहीं होने दिया। महाराजा रणजीत सिंघ के शासन-तंत्र में जम्मू का डोगरा राजपूत धिआन सिंघ प्रधानमंत्री था। लाहौर के सम्मानित फकीर खानदान के तीन भाई--अजीजुद्दीन, नूरुद्दीन और इमामुद्दीन में से एक विदेश मंत्री था, एक गृह मंत्री था और एक शाही खजाने का प्रबंधक था। वित्त मंत्रालय का सारा काम काजी दीवान दीनानाथ, अयोध्या प्रसाद, भवानी प्रसाद संभालते थे। दीवान मोहकम चंद एक वणिक परिवार से था, जो महाराजा रणजीत सिंघ की प्रारंभिक विजयों का सेनानायक था। आगे चलकर सरदार हरी सिंघ नलूआ ने सेना की कमान संभाली थी और अपने पराक्रम से अफगानिस्तान तक अपने नाम की दहशत फैला दी थी।

महाराजा रणजीत सिंघ का शासन-काल सही अर्थों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आदर्शों के अनुसार सर्वधर्म-समभाव का उदाहरण था। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि विभिन्न धर्मों के सह-अस्तित्व की भावना को यह धर्म-ग्रंथ न केवल पुष्ट करता है बल्कि बल भी देता है।

पिछली शती में धर्म और राजनीति का घालमेल इतना बढ़ा कि वह इस देश के विभाजन में प्रतिफलित हुआ। परिणाम हमारे सामने है। सिक्ख धर्म में धर्म और राजनीति का सुमेल गुरु नानक साहिब के समय से ही रहा है। इस सुमेल को संतुलित अवस्था में बनाए रखते हुए हमें राजनीति का प्रयोग धर्म की सलामती के लिए तथा धर्म का प्रयोग आदर्श राजनीति करने के लिए करते रहना चाहिए।

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४८

वीर रस का अद्भुत कवि - ढाडी भाई मीर छबीला

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

दशमेश पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबार में सिर्फ विद्वान और कवि ही नहीं थे बल्कि अनेक 'ढाडी' भी थे जो अत्यंत उच्च कोटि की काव्य-रचना किया करते थे। भाई मीर छबीला इसी तरह के ढाडी थे जो साथ ही साथ एक श्रेष्ठ कवि भी थे। 'ढाडी' वह गायक होता है जो वीर रसात्मक गाथाओं को गाकर सुनाता है। गुरु-दरबार में ये प्रथम पातशाह के काल से ही मौजूद रहे हैं। छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने जब सिक्खों को शस्त्रधारी बनाने का कार्य आरंभ किया तो वीर रस से भरपूर गाथाएं सुनाने वाले ढाडियों का महत्व बहुत बढ़ गया। दशमेश पिता का समय भी जंगों-युद्धों का समय था। उनके दरबार में भी ढाडियों को एक विशेष स्थान प्राप्त था।

भाई मीर छबीला ऐसा ही एक ढाडी था जो संगत को वीर रस-प्रधान गाथाएं गाकर सुनाता और उनमें शौर्य एवं उत्साह का संचार करता। इन वीर रसात्मक गाथाओं को 'वार' कहा जाता है। भाई मीर छबीले ने अनेक वारों की रचना की। इन वारों में गुरु साहिबान की स्तुति, दशम पातशाह के शौर्य का वर्णन एवं युद्धों का वीर रसात्मक विवरण बड़े काव्य-कौशल के साथ प्रस्तुत किया गया है। भाई मीर छबीला परमात्मा की महिमा का वर्णन करते हुए कहता है :

तू साढ तिहत्थी मेदनी, सभ धंदे लाई।
तू वड्ढा पुरख महांबली, धुर अजमत पाई।
तू जग आइओं बलराज होइ, तूं देहि वधाई।
तैनूं जनक धरे सिर सिहरे, सीता परणाई।
तूं नामे उते बहुड़िओ, मोई गऊ जिवाई।
तूं दरोपतां दी पैज राखी, काइआ कजवाई।
तूं मच्छ आकाशों लाहिआ, सर धनुख चलाई।
नानक अंगद अमरदास, रलि भगति कमाई।
तूं चहुं जुगां विच पढ़ीदा, चार वेद उगाही।
तेग बद्धी गुरू गोबिंद सिंघ, दसवीं पातशाही।

वीर रस-प्रधान काव्य रचने में भाई मीर छबीला को गजब की महारत हासिल थी। जरा दशमेश पिता की भंगाणी-विजय का वर्णन देखें:

करी चढ़ाई सोढीआं, गहिरी सट्ट पई जमधाणी।
लड्डू खुरमे सार दे, राजे मिहमाणी।
कोटीं रोवण राणीआं, ढुकण मुकाणी।
फतेह पाई गोबिंद सिंघ, जित्तिआ भंगाणी।

भाई मीर छबीला को तत्कालीन बोल-चाल की पंजाबी के प्रयोग पर अद्वितीय कुशलता प्राप्त थी। उसकी भाषा की रवानगी अत्यंत उच्च कोटि की है। युद्ध-वर्णन करते समय वह अद्भुत बिंबों और उपमाओं का प्रयोग करता है:

हरी चंद वंगारिआ, रण नाचे घोड़े।
बाण चलित्ता सोध के, तीर ताजा जोड़े।
जाण धतीरा बार विच, चुख चिंजू बोड़े।
आख 'छबीला' ढाडीआ, कित वंझ मरोड़े।

अपनी अद्भुत काव्य-प्रतिभा के कारण भाई मीर छबीले का दशमेश पिता के दरबारी कवियों में विशेष स्थान है।

१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१

ख़बरनामा

केंद्र सरकार 'सिक्ख अनंद मैरिज एक्ट' को मौजूदा संसद-सत्र में पास करे - जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ८ दिसंबर। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के मुख्य कार्यालय से जारी एक बयान में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि सिक्ख जगत की भावनाओं की तरजमानी करते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी केंद्र सरकार के साथ समय-समय पर बातचीत करके मांग करती आ रही है कि सिक्खों के बच्चे, बच्चियों के विवाह दर्ज करने के लिए पूर्ण रूप में 'अनंद मैरिज एक्ट १९०९ ई' में संशोधन करके इसको तुरंत लागू किया जाये। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि सिक्ख धर्म स्वतंत्र एवं सम्पूर्ण धर्म है, जिसकी फिलासफी, जीवन-जाच, रस्मो-रिवाज, धर्म-ग्रंथ, निशान आदि अन्य धर्मों से बिलकुल भिन्न हैं जो सिक्ख गुरु साहिबान के महान उपदेशों तथा पावन श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी पर आधारित हैं। उन्होंने कहा कि 'अनंद मैरिज एक्ट' की प्राप्ति के लिए सिक्खों को बड़ा संघर्ष करना पड़ा था। उन्होंने कहा कि सिक्ख गुरु साहिबान ने बड़े लंबे-चौड़े तथा खर्चीले रस्मों-रिवाजों की जगह बिलकुल सादे ढंग से, जिसमें विवाह-शादी के लिए 'अनंद कारज' की रस्म शामिल है, शुरू करवाये।

आज भी सिक्ख उसी आशय के अनुसार अपने विवाह/शादियां करते हैं मगर उसकी रजिस्ट्रेशन 'अनंद मैरिज एक्ट' के अधीन नहीं बल्कि 'हिंदू मैरिज एक्ट' के अधीन होती है जो सिक्खों के साथ शरेआम धक्का है। जत्थेदार अवतार सिंघ ने जोरदार शब्दों में मांग करते हुए कहा कि केंद्र सरकार चल रहे संसद-सत्र में 'सिक्ख अनंद मैरिज एक्ट' को पूर्ण स्वतंत्र रूप से लागू करने की स्वीकृति दे जिससे सिक्ख अपने बच्चे-बच्चियों के विवाह की रजिस्ट्रेशन 'अनंद मैरिज एक्ट' के अधीन दर्ज करवा सकें।

बयान जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि पड़ोसी देश पाकिस्तान की सरकार २००८ में उपरोक्त एक्ट में संशोधन करके पाकिस्तान में बसते सिक्खों के विवाह 'अनंद मैरिज एक्ट १९०९ ई' के तहत दर्ज करवाने की स्वीकृति देकर समूह संसार के सिक्खों की प्रशंसा कमा सकती है तो फिर भारत सरकार को ऐसा करने में क्या कठिनाई है? जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि शिरोमणि गु: प्र: कमेटी संसार भर के सिक्खों की भावनाओं की तरजमानी तथा नेतृत्व करती है। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा की जा रही इस मांग पर केंद्र सरकार गंभीरता से विचार करे तथा इसकी ओर ध्यान देकर इसकी पूर्ति करे। उन्होंने कहा कि हमें भारत के कानून मंत्री जनाब सलमान ख़ुर्शीद ने यह भरोसा दिया था कि जल्द ही 'अनंद मैरिज एक्ट' लागू कर दिया जायेगा। जितनी देर संसद में 'अनंद मैरिज एक्ट' स्वीकृत होकर कानून की शक्ल में लागू नहीं हो जाता उतनी देर सिक्ख कौम की यह मांग अधूरी है।

श्री अकाल तख्त साहिब पर पांच सिंघ साहिबान द्वारा स. परकाश सिंघ बादल को 'फख्र-ए-कौम पंथ रत्न' सम्मान से सम्मानित किया

श्री अमृतसर : ५ दिसंबर। माननीय स. परकाश सिंघ बादल, मुख्यमंत्री पंजाब ने श्री

अनंदपुर साहिब में ८वें अजूबे के रूप में विलक्षण सिक्ख इतिहास को दर्शाता 'विरासत-ए-खालसा'; लगभग ग्यारह हजार की तादाद में सिंघ-सिंघणियों एवं बच्चों की शहादत को दर्शाती 'छोटा घल्लूघारा शहीदी यादगार' काहनूवान छंब, गुरदासपुर; लगभग पैंतीस हजार सिक्ख-शहादतों को दर्शाती 'बड़ा घल्लूघारा शहीदी यादगार' कुप्प रुहीड़ा, मलरेकोटला, जिला संगरूर तथा महान सिक्ख जरनैल बाबा बंदा सिंघ बहादुर की सरहिंद फतह की यादगार 'फतह बुर्ज' के रूप में चपड़चिड़ी के मैदान में बनाकर अपने राजसी जीवन के अलावा धार्मिक जजबे का भी प्रमाण दिया है। इसके अलावा स. परकाश सिंघ बादल ने अपनी जिंदगी के लगभग ६० वर्ष सिक्ख कौम-देश की सेवा करते हुए लंबा समय जेलें भी काटीं। इनके धार्मिक क्षेत्र के कार्यों को सम्मुख रखते हुए पांच तख्त साहिबान के जत्थेदार साहिबान ने श्री अकाल तख्त साहिब पर हुए एक बड़े समारोह के दौरान माननीय मुख्यमंत्री पंजाब स. परकाश सिंघ बादल को विशाल रूप से एकत्र संगत के इकट्ठ में 'फख्र-ए-कौम पंथ रत्न' सम्मान दिया।

इस अवसर पर पंजाब के उप-मुख्यमंत्री स. सुखबीर सिंघ बादल, पंजाब की समूची अकाली लीडरशिप, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ तथा शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के समूह सदस्यगण के अलावा समूह सिक्ख जत्थेबंदियां उपस्थित थीं। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी सचिव स. दलमेघ सिंघ तथा समूह स्टाफ भी इस कार्यक्रम में शामिल था।

केंद्र सरकार विदेशी हवाई अड्डों पर दसतार सम्बंधी सिक्खों के होते अपमान के बारे में संजीदा नहीं

श्री अमृतसर : ८ दिसंबर। अलग-अलग देशों के हवाई अड्डों पर सिक्खों की तलाशी लेने के बहाने उनकी दसतार उतरवाकर अपमानित किये जाने पर शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने केंद्रीय सरकार को दोषी ठहराते हुए कहा कि सरकार सिक्खों की समस्याओं के हल के लिए बुरी तरह से असफल रही है। उन्होंने कहा कि आज सिक्ख भाईचारा दुनिया के १६१ देशों में अपने-अपने कामकाजी सरोकारों के कारण बसा हुआ है और अपनी मातृ-भूमि पंजाब में आना-जाना हर सिक्ख का लगा रहता है। इस कारण जब सिक्ख भाईचारे के लोग हवाई अड्डों पर जाते हैं तो तलाशी के बहाने उनकी दसतार उतरवाकर उनका अपमान किया जाता है।

शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के केंद्रीय कार्यालय से जारी एक बयान में जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि हम केंद्र सरकार से संबंधित कई मंत्रियों से कई बार मिलकर उन्हें इस मसले का कूटनीतिक स्तर पर हल करने के लिए कह चुके हैं। पंजाब के संसद सदस्यों ने भी पार्लियामेंट में यह मामला कई बार उठाया है, परंतु भारत सरकार सिक्ख मसलों के प्रति संजीदा नजर आती दिखाई नहीं दे रही। उन्होंने प्रधानमंत्री से जोरदार मांग की वे इस मसले के प्रति शीघ्र उचित कदम उठायें।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०१-२०१२